RNI No. 7127/60
डाक पंजीयन संख्या – Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 62 अंक : 05 प्रकाशन तिथि : 25 अप्रेल कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 मई 2025
शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

हिन्दूपति परताप पत राखी हिन्दवाण री।
सहै विपत संताप सत्य सपथ कर आपणी।।

सोयो सह संसार असुर पलो ले ऊपरै।
जागै जगदातार पोहरे राण प्रतापसी।।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के वरिष्ठ स्वयं सेवक, विश्व स्तरीय शुद्ध साहित्यिक यूट्यूब चैनल डिंगल रसावल के संस्थापक, हिंदी और राजस्थानी के मूर्धन्य कवि-लेखक, राजस्थान शिक्षा सेवा से सेवानिवृत्त **श्री दीपसिंह रणधा** को राजस्थानी भाषा साहित्य को बढ़ावा देने के क्षेत्र में स्थायी महत्व की दीर्घकालिक उच्च स्तरीय सेवाओं के उपलक्ष्य में जोधपुर के 567 वें स्थापना दिवस पर वर्ष 2025 के मारवाड़ रत्न सम्मान के अंतर्गत पद्मश्री सीताराम लाळस सम्मान से सम्मानित होने पर बधाईयां एवं उत्तरोत्तर श्री वृद्धि की शुभकामनाएं।

शुभेच्छु बंधुगण

श्री नरपत सिंह चिराणा, भवानीसिंह मुंगेरिया , कृष्णसिंह राणीगाँव , महिपालसिंह चूली
राजेन्द्रसिंह भिंयाड़ (द्वितीय), समुन्द्रसिंह देदूसर, स्वरूपसिंह मुंगेरिया, गणपतसिंह बूठ,
भगवतसिंह जसाई, नेपालसिंह भीखसर, प्रेमसिंह दूधवा, शैतानसिंह तुड़बी, नींबसिंह आकोड़ा
लालसिंह आकोड़ा, प्रतापसिंह बाँदरा, उदयसिंह लाबराऊ, देवीसिंह राणीगाँव, वालमसिंह आकोड़ा
झामनसिंह देदूसर, नरपतसिंह भालीखाल, अशोकसिंह भीखसर, विजयसिंह माडपुरा, छैलसिंह भीमरलाई
सरदारसिंह बूठ, नारायणसिंह परावा, दुर्जनसिंह दूधवा (द्वितीय), वीरसिंह गंगासरा, कुशलसिंह गडरारोड
छगनसिंह लूणू, सज्जनसिंह उगेरी, साँवल सिंह भैंसड़ा, महेंद्रसिंह दूधवा, भवानी सिंह रणधा, महेंद्र सिंह चोहटन

हार्दिक अभिनंदन

राजस्थान पुलिस दिवस के राज्य स्तरीय समारोह में बाड़मेर जिले के गौरव **श्री रतनसिंह जी लूणु (IPS)** को मुख्यमंत्री श्री भजनलाल जी शर्मा द्वारा राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित किए जाने पर हम हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ प्रेषित करते हैं। आपकी कर्तव्यनिष्ठा, सेवा और समर्पण को समर्पित यह सम्मान हम सभी के लिए गर्व का विषय है। आपकी सफलता हम सभी के लिए प्रेरणा का स्त्रोत है।

संघशक्ति

4 मई, 2025

वर्ष : 62 अंक : 05

-: सम्पादक :-

राजेन्द्र सिंह राठौड़

शुल्क - एक प्रति : 15/- रुपये, वार्षिक : 150/- रुपये, पंचवर्षीय : 700/- रुपये, दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय - सूची

❍ समाचार संक्षेप	✍	04
❍ चलता रहे मेरा संघ	✍ श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर	05
❍ कुछ है जो छूट रहा	✍ मगसिंह राजमथाई	06
❍ पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)	✍ श्री चैन सिंह बैठवास	07
❍ बाधाओं दुविधाओं के बन्धन को तोड़के...	✍ रेंवतसिंह पाटोदा	10
❍ आज़ादी का परवाना महाराणा प्रताप	✍ डॉ. कमल सिंह बेमला	13
❍ इनके बिना काम न बनेगा	✍ महेन्द्र सिंह गूजरावास	17
❍ आत्म सुधार व लोक व्यवहार	✍ रतन कँवर सेतरावा	18
❍ जीवन का लक्ष्य	✍ राजलक्ष्मी	19
❍ राजा-महाराजा से लेकर आम राजपूत.....	✍ युधिष्ठिर	20
❍ क्षत्रिय समाज में विवाह संस्कार तब और...	✍ राजेन्द्र सिंह राणीगाँव	24
❍ आओ! कुछ चिन्तन करें-4	✍ भंवरसिंह मांडासी	26
❍ तोड़ो भी तो	✍ भंवरसिंह देवगाँव	28
❍ खंडहर बता रहे वैभव की गाथा	✍ डॉ. मातुसिंह मानपुरा	29
❍ अपनी बात	✍	33

समाचार संक्षेप

संस्कार निर्माण शिविरों का आयोजन :– 1 अप्रेल से 14 अप्रेल के मध्य दो प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर (बालक वर्ग) एक प्राथमिक प्रशिक्षण शिविर (मातृशक्ति वर्ग) एक माध्यमिक प्रशिक्षण शिविर (बालक वर्ग) तथा एक दम्पती शिविर का आयोजन हुआ। जिनमें 455 शिविरार्थियों ने भाग लिया। माध्यमिक प्रशिक्षण शिविर उदयपुर में शिविरार्थियों को संघप्रमुख श्री का सान्निध्य प्राप्त हुआ। दम्पती शिविर में 110 दम्पती आये। इनमें नव दम्पती से लेकर बुजुर्ग दम्पती तक शामिल हुए। गृहस्थ जीवन में परिवार में किस प्रकार स्नेह, प्रेम, सहयोग, उत्तरदायित्व, निर्वहन, सदाचार का समावेश हो, इस पर चर्चा तथा उद्‌बोधन दिये गये, साथ ही राजस्थान इतिहास के गौरव चित्तौड़ दुर्ग का भ्रमण कार्यक्रम भी रखा गया।

कानपुर में संरक्षक श्री के सान्निध्य में समाज बन्धुओं की बैठक 18 मार्च को आयोजित हुई जिसमें संघ कार्य के विस्तार के लिए शिविर आयोजन पर चर्चा हुई। संरक्षक श्री ने अपने उद्‌बोधन में गौरवशाली क्षत्रिय इतिहास से प्रेरणा लेने तथा वर्तमान में अपने उत्तरदायित्व बोध को पहचानते हुए कार्य करने की बात कही।

चित्तौड़ में तीन दिवसीय जौहर मेला :– तीन दिवसीय जौहर मेले का मुख्य कार्यक्रम 25 मार्च को आयोजित हुआ। जिसमें राजस्थान के मुख्यमंत्री सहित कई नामचीन महानुभावों ने भाग लिया। यहाँ संघप्रमुख श्री लक्ष्मणसिंह जी बेण्याकाबास ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि भावी पीढ़ी के सम्मान एवं गौरव की रक्षा क्षात्रधर्म के पथ पर चलने से होगी। चित्तौड़ दुर्ग में हुए जौहर हमें युगों-युगों तक प्रेरणा देते रहेंगे।

वीर शिरोमणि राव कूंपा जी की अष्ट धातु मूर्ति का अनावरण :– ब्यावर जिले में स्थित प्रसिद्ध युद्ध स्थली गिरी-सुमेल में 19 मार्च को राव कूंपा जी का बलिदान दिवस मनाया गया। यही वह स्थान है जहाँ जेता और कूंपा के नेतृत्व में 8600 राजपूत यौद्धाओं ने शेरशाह सूरी के 80 हजार सैनिकों को नाकों चने चबवा दिये थे। 481वें बलिदान दिवस पर अष्ट धातु की भव्य मूर्ति का अनावरण समारोह आयोजित किया गया।

महाराजा राव खंगार जी की 500वीं जयन्ती का आयोजन :– कच्छावा वंश की खंगारोत शाखा के मूल पुरुष राव खंगार जी की 500वीं जयन्ती का आयोजन 22 मार्च को नरायणा (दूदू) में किया गया। वक्ताओं ने राव खंगार जी के जीवन परिचय तथा देश, धर्म एवं प्रजाहित में उनके द्वारा किये गये कार्यों का उल्लेख किया। इसी कार्यक्रम में समाज की प्रतिभाओं का सम्मान किया गया।

श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन की गतिविधियाँ :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के अनुषांगिक संगठन श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन ने 4 से 6 अप्रेल तीन दिवसीय ''अचीवर्स मीट 2025'' का आयोजन अनंता रिसोर्ट में किया जिसमें राजनीति, व्यवसाय तथा प्रशासन के क्षेत्र में नये आयाम स्थापित करने वाले 100 समाज बन्धुओं ने भाग लिया। इसके अलावा तीन दिवसीय कार्यशाला का आयोजन सीकर जिले के सामी गाँव में 9 से 11 अप्रेल को किया गया। जिसमें श्री क्षत्रिय युवक संघ की कार्य प्रणाली तथा फाउण्डेशन के उद्देश्यों पर चर्चा की गई। ई.डब्लू.एस. प्रमाण पत्र बनाने के जागरुकता शिविरों का आयोजन बाड़मेर, नागौर तथा पाली जिले में किया गया।

(शेष पृष्ठ 9 पर)

चलता रहे मेरा संघ

(माननीय भगवान सिंह जी रोलसाहबसर के मेवाड़ क्षेत्र के प्रवास के समय एक स्थान पर दिए उद्बोधन का संक्षेप)

पूरे संसार में यदि रहने लायक कोई देश है तो वह भारतवर्ष है। यदि कोई इस देश के प्रति हीन भावना रखता है तो उसने अभी तक इस देश को जाना ही नहीं और कुछ गलत ही जान लिया है। इस भारत वर्ष में यदि कोई रहने लायक प्रिय जगह हो सकती है तो वह वीरों की भूमि है-मेवाड़ हो, मारवाड़ हो या राजस्थान के अन्य स्थान हों। यहाँ ऐसे त्यागी लोग होते हैं जो कर्तव्य के सामने अपने जीवन को कुछ नहीं समझते। चाहे उन्होंने गीता पढी हो या नहीं लेकिन वे क्षर व अक्षर को जानते हैं। नष्ट होने वाला क्या है और शाश्वत क्या है, यह ज्ञान यहाँ के जीवन में था, हमारी रग-रग में था। वह सब अब कहाँ गया? अभ्यास के अभाव में अब नहीं रहा। यदि आवश्यकता महसूस करते हो हमारे पूर्वजों जैसे कर्म करने की तो इसके लिए कोई मुहूर्त नहीं निकाला जाता। मुहूर्त निकालते हैं भ्रम में रहने वाले लोग शुभ कार्य तो तुरन्त ही प्रारम्भ हो जाना चाहिये। यही तो शास्त्र कहता है-शुभस्य शीघ्रं।

भगवान श्री रामचन्द्र जी का युवराज पद पर अभिषेक होने की तैयारी हुई। महाराज दशरथ ने श्री वशिष्ठ जी से कहा कि अब श्रीराम को युवराज पद पर अभिषिक्त कर देना चाहिये, आपका क्या मत है। उत्तर मिला-बिल्कुल कर दिया जाना चाहिए, वे हर तरह से योग्य हैं। महाराज दशरथ ने कहा-तो मुहूर्त निकालिए कब अभिषेक किया जाए। तो वशिष्ठ जी ने जो कहा वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कहा-यदि यह इतना उत्तम है जो आपको भी स्वीकार्य है, मैं भी स्वीकार करता हूँ, तो फिर मुहूर्त की कहाँ आवश्यकता है। लेकिन एक दिन टाल दिया गया कि कल करेंगे। यदि उसी दिन हो जाता तो आगे जो बखेड़ा हुआ वह नहीं होता। फिर रामायण ही दूसरी होती। एक ही दिन टाल देने से पूरी व्यवस्था ही बदल गई। यदि शुभस्य शीघ्रं को अपनाते तो कोई गड़बड़ न होती।

संस्कार निर्माण के महत्व की बातें अभी खूब सुनी गई। बहुत अच्छी बातें आपने इस संदर्भ में की। तो अब संस्कार निर्माण का काम कब शुरू करने वाले हैं? अगर इसको कल पर टाला गया तो वही हश्र होगा जो अयोध्या का हश्र हुआ। और अगर कोई इसके महत्त्व को समझते हुए इसे तुरन्त शुरू कर देता है तो मंजिल की राह पर यात्रा प्रारम्भ हो जाती है। अक्सर लोग बातें किया करते हैं कि आओ सब मिलकर फैसला करते हैं कि क्या करना चाहिए। पूज्य नारायणसिंह जी रेड़ा ने बताया था कि सब मिलकर फैसला करने की बातें ही की जाती हैं, सब का मिला हुआ फैसला होता ही नहीं है। क्या महाराणा प्रताप ने सब राजाओं से मिलकर अकबर के विरुद्ध संघर्ष का फैसला किया था? क्या रणथम्भौर में हमीर ने दुश्मन के अपराधी को शरण किसी से सलाह लेकर दी थी? क्या हाड़ी रानी ने लोगों से सलाह मशवरा किया था? बहुत कीमत देनी पड़ी इनको लेकिन वे अमर हो गए। सलाह लेकर फैसला करने वाले अधिकतर अन्तर विरोध में ही फंसे रहते हैं।

श्री क्षत्रिय युवक संघ कहता है कि अपनी सुनो। अर्थात् हमारी समझ में बात सही है, कर्म सही है तो तुरन्त प्रारम्भ कर लो। यह नहीं कहते कि माता-पिता की आज्ञा का पालन न करे। यह नहीं

कहते कि पत्नी की उपेक्षा करो, समाज की उपेक्षा करें, लेकिन निर्णय लेने वाला तो व्यक्ति स्वयं ही होता है। पू. नारायणसिंह जी की बात जिस दिन से सुनी है, उस दिन से मुझे लगता है कि जो जच गया वह करना है तो उसके लिये दूसरों से क्या पूछना। क्या किसी का ठप्पा लगाना आवश्यक है? मुझे तुरन्त शुरू कर देना चाहिए। तो संस्कारों की यहाँ व्याख्या हुई। संस्कार किस तरह दिए जाने चाहिए और सभी जो उत्तर आए, वे ही जो समाज में प्रचलित हैं। वे सही थे, गलत इसमें कुछ नहीं, लेकिन बात है शुरू करने की। शुरू करने के बाद जीवन भर करते रहने की। मैं स्पष्ट कर दूं कि यह काम है बड़ा कठिन। कई लोग आते हैं और कहते हैं कि रोज-रोज इतना इकट्ठा क्यों करते हो? हमें कह देना कि किसका सिर काटना है, हम काट देंगे, किसका सिर फोड़ना है, हम फोड़ देंगे। एक बार कह दो जो कहना है, यह रोज-रोज शाखा में आना हमसे नहीं होता। रोज-रोज नहीं आएंगे, संस्कारित नहीं होंगे तो किसका सिर काटना है, किसका सिर फोड़ना है यह भी गलत हो जाएगा। अपराध कर बैठेंगे। संस्कारित होने पर ही सही मार्ग पर चल पाते हैं। श्री क्षत्रिय युवक संघ का कहना तो है कि निरन्तर, नियमित अभ्यास के बिना स्तम्भ भी कभी भी हिल सकते हैं। क्योंकि अभ्यास के बिना जब हम जीवन विकास की सीढी चढते हैं तो अन्तिम सीढी के पास पहुँचकर भी गिरने की संभावना बनी रहती है। और वहाँ से गिरेंगे तो बड़ी खतरनाक स्थिति हो जाती है। अभ्यास जो रुक जाए तो आज जो संघ के स्तम्भ दिखते हैं, उनकी भी दुर्गति हो सकती है। विद्यार्थी, शिक्षक आदि सभी में अभ्यास का रुक जाना खतरनाक है। इसलिए जो करने योग्य है, उसको तुरन्त करना प्रारम्भ कर दिया जाए और फिर कभी रुके नहीं, कर्म चलता रहे, अभ्यास चलता रहे। चलने के अपने संकल्प को दृढ करें और चलते रहें, यही संघ की चाह है। ●

कुछ है जो छूट रहा

– मगसिंह राजमथाई

कर्मज्ञान के उन किस्सों को, अब तक ना सुलझाया।
नवप्रभात की मधुपर्क वेला में, प्रण को मैंने भुलाया।
सोया हूँ मैं मदहोशी में, कोई मकरंद लूट रहा है।
जीवन के इस कोलाहल में, कुछ है जो छूट रहा है।।

छूटा वह जो मझरातों में, दीपक बनकर जलना था।
भाव-कर्म को एक बनाकर, मंजिल पथ पर चलना था।
पर मार्ग की मनुहारों में, साध्य-संकल्प टूट रहा है।
जीवन के इस कोलाहल में, कुछ है जो छूट रहा है।।

पद-प्रतिष्ठा, धन-दौलत भी, मैंने खूब खूब कमाई।
ईर्ष्या-असंतोष-स्वार्थ बड़ा, इसी में ही ज़िन्दगी खपाई।।
पर असली वैभव का ताला, अब तक भी अटूट रहा है।
जीवन के इस कोलाहल में, कुछ है जो छूट रहा है।।

मुझे मिला था स्वर्णिमपथ, पर ना इसको पहचाना।
मति-गति विभ्रष्ट बनाकर, यहाँ-वहाँ सिर्फ़ मंडराना।।
भीतर खाली सिर्फ़ छलावा, अब तो भांडा फूट रहा है।
जीवन के इस कोलाहल में, कुछ है जो छूट रहा है।।

समय शेष है अब भी उठकर, पुरुषार्थ पथ कदम बढ़ाएँ।
मार्ग की सब मुसीबतों और, आफ़तों से आगे बढ़ जाएँ।।
एकाकी बनकर अरे परवाने!, दीपक से तू रूठ रहा है?
जीवन के इस कोलाहल में, कुछ है जो छूट रहा है।।

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)
''जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया''

– चैनसिंह बैठवास

सृष्टि की अद्भुत घटना है श्री क्षत्रिय युवक संघ। सृष्टि में बहुत कम अवसर ऐसे होते हैं जब अद्भुत घटनाएँ घटती हैं और उन्हीं अद्भुत घटनाओं में से एक है श्री क्षत्रिय युवक संघ का अभ्युदय।

श्री क्षत्रिय युवक संघ अनायास ही घटने वाली कोई घटना नहीं है, इस घटना के घटित होने के पीछे कोई ईश्वरीय प्रयोजन है, उसका कोई हेतु है, पर हम जैसे सामान्य लोगों की समझ के परे की बात है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी सोच के अनुसार हर वस्तु का आकलन करता है, उसी प्रकार से हम लोग श्री क्षत्रिय युवक संघ का भी आकलन अपनी धारणाओं के अनुसार ही करते हैं। राजनीति में रुचि रखने वाला संघ को राजनीतिक दृष्टि से देखता है, तो कोई यहाँ के खेल देखकर इसे बच्चों का खेल समझ लेता है, कोई इसे सामाजिक संगठन मानता है, तो कोई इसे साधना मार्ग के रूप में देखता है। जो व्यक्ति जिस धारणा के साथ संघ को देखता है उसे वैसा ही समझ लेता है लेकिन संघ केवल हमारी धारणाओं तक ही सीमित नहीं है। वास्तव में यह चारों पुरुषार्थों की प्राप्ति कराने वाला सर्वांगीण मार्ग है। संघ को बातों से नहीं समझा जा सकता, केवल अनुभव से ही समझा जा सकता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ सृष्टि की अद्भुत घटना कैसे? क्यों आवश्यकता पड़ी इसके गठन की? इसको समझने और जानने के लिए हमें क्षात्र धर्म और क्षत्रिय को पहले समझना होगा।

क्षात्र धर्म आदिकाल से चलता आ रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ में नारायण पूर्ण सत्व स्वरूप थे। नारायण ने सृष्टि की रचना करने वाले ब्रह्मा की मधु और कैटभ नाम के दो राक्षसों से रक्षा की। यहीं से क्षात्रधर्म शुरू होता है। आदिदेव विष्णु द्वारा प्रथम क्षात्र धर्म ही प्रवृत किया गया था। शेष धर्म इसके पश्चात् प्रवृत हुए थे। क्षात्र धर्म में सभी धर्मों का समावेश है, अत: इसे श्रेष्ठ धर्म कहा जाता है।

सर्वधर्मकरं लोक श्रेष्ठं सनातनम्।
शाश्वदक्षरपर्यन्तमक्षरं सर्वातो मुखम्।।

(म.भा.शां.रा.ध.पर्व, अध्याय 64,30)

''क्षात्रधर्म सर्वधर्मों का प्रवर्तक और रक्षक, इस लोक में श्रेष्ठ, सनातन, नित्य, अविनाशी और मोक्ष पर्यन्त ले जाने वाला सर्वतोमुखी धर्म है।''

क्षात्रधर्म देश, काल और परिस्थितियों से भी ऊपर उठकर अपरिवर्तनशील है, इसीलिए इस क्षात्रधर्म की युगसापेक्षता सदैव के लिए अक्षुण्ण है। क्षात्र धर्म की युग प्रणाली शाश्वत सिद्धान्तों पर आधारित होने के फलस्वरूप यह स्थिर तथा वैज्ञानिक है।

ऐसे श्रेष्ठ धर्म को धारण करने वाला क्षत्रिय है। प्रकृति त्रिगुणात्मक है। क्षत्रिय शब्द भी प्रकृति के तीन गुण–सत्, रज और तम के आधार पर ही बना है। सतोगुण और तमोगुण प्रकृति के दो छोर हैं। नदी के किनारे जिस प्रकार मिल नहीं सकते, उसी प्रकार सतोगुण और तमोगुण भी मिल नहीं सकते। इन दोनों के बीच कड़ी रजोगुण है। इच्छा और क्रियाशीलता की प्रधानता वाला गुण रजोगुण है। यह इच्छा और क्रियाशीलता किस ओर ढलती है–सत या तम, उसी प्रकार उसकी श्रेणी बनती है। रजोगुण जब सतोगुण की ओर उन्मुख होता है, तब क्षत्रिय वृति का जन्म होता है तो वह क्षत्रिय बनता है। रजोगुण जब तमोगुण की ओर उन्मुख होता है, तब आसुरी वृति उत्पन्न होती है तो असुर यानी राक्षस बन जाता है।

क्षत्रिय वही है जो सतोगुण का पक्षधर है, जो सत

का पक्ष लेता है वही ''परित्राणाय साधूनां, विनाशाय च दुष्कृताम्'' है।

''क्षतात् त्रायते इति क्षत्रिय'', जिसका पौरुष अपने स्व की रक्षा करता हुआ दूसरों के हितों की रक्षा करे, वह क्षत्रिय है। जो सत्य है, जो ज्ञानमय है, जो प्रकाशमय है, जो न्यायप्रिय है, जो सज्जन है, जो साधू है यानी सुकृत कार्य करने वाले हैं, उन सबकी दुष्टों से, दुर्जनों से रक्षा कर दुर्जनों का विनाश करने वाला ही क्षत्रिय है। यानी विष रूपी प्रवृति का विनाश करता है और अमृत रूपी प्रवृति की रक्षा करता है, वही क्षत्रिय है।

त्राण या रक्षा दैहिक व भौतिक ही नहीं, अंधकार व अज्ञान से भी रक्षा करता है, वो क्षत्रिय है। हर प्रकार के क्षय से स्वयं की तथा अन्यों की रक्षा करने वाला क्षत्रिय कहलाता है।

त्रस्त मानव समाज को दयनीय स्थिति से उबारने वाला, सबको राह पर रखने वाला, प्रजा का पालन-पोषण और रक्षण का उत्तरदायित्व निभाने वाला, साधु-सन्तों व सज्जनों का आश्रयदाता, सदैव सत्य, न्याय और धर्म का हिमायती, दुष्टों और दुर्जनों का संहारक, आन-बान और मान-मर्यादा के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाला क्षत्रिय है।

चारों वर्णों में क्षत्रिय वर्ण एक ऐसा है जो अपने लिए नहीं अपितु दूसरों के लिए जीता है और दूसरों के लिए अपना उत्सर्ग कर देता है। क्षत्रिय की पैदायश दूसरों के लिए ही है, इसलिए अपने लिए जीना क्षत्रिय के लिए कष्टपूर्ण जीवन है और दूसरों के लिए जीवन जीना उनके लिये सुखद अहसास है। दूसरों के लिए जीने का जो आनन्द है, वह और किसी में नहीं है। इस जीवन में, वे ही क्षण आनन्द के होते हैं, जब दूसरे के लिए भले ही थोड़ी देर के लिए ही सही, जीवन जीते हैं।

क्षत्रिय का तो उद्‌भव ही दूसरों के त्राण व रक्षण के लिए हुआ है, इसलिए क्षत्रिय जन मानस व प्राणी मात्र के कल्याण व रक्षण के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करता आया है। उनकी यही नियति है। त्याग, बलिदान व उत्सर्ग ही उनका जीवन है।

पूज्य श्री तनसिंह जी ने बताया-

''क्षत्रिय की पैदायश ही परमार्थ के लिए हुई है, उनका व्यक्तिगत कुछ है ही नहीं। विधाता ने उनके भाग्य में परोपकार व परमार्थ ही लिखा है, यही उनकी नियति है और यही उनका नियत कर्म है।''

हमारी सामाजिक व्यवस्था जैसी अन्यत्र कहीं भी ऐसी सामाजिक व्यवस्था नहीं थी। अपना बलिदान देकर दूसरों को जीवनदान देना सदियों से हमारी परम्परा रही है।

ऐसे श्रेष्ठ धर्म के पालन की इच्छा रखने वाले क्षत्रिय अपने प्रमाद व संस्कारहीनता के कारण सतोगुणीय भाव से गिरकर तमोगुण से आक्रान्त होकर पथ विचलित, धर्मच्युत और अपने कर्तव्य व उत्तरदायित्व से विमुख हो गये। उनमें जो त्याग की भावना थी वो लुप्त होने लगी और त्याग की जगह स्वार्थ भावना घर करने लगी। परिणामस्वरूप हमारे इस गौरवपूर्ण इतिहास का आधार बलि होने की परम्परा व आत्मबल था जो अब निस्तेज होने लगा। क्षत्रिय समाज की दशा और दिशा बिगड़ने लगी। समाज में अनेक दोष पैदा हो गये और समाज में विसंगतियाँ बढ गई। स्वाभिमानी क्षत्रिय समाज का गौरव काल की गति के साथ गिर गया, समय के प्रवाह में बह गया। सारी व्यवस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गयी। समाज की दशा क्या बिगड़ी, संगठन के अभाव में पूरा का पूरा समाज बिखर कर कण-कण हो गया। अब इसके पास न समृद्धि रही, न सहारे के रूप में कोई सहयोगी। साधनहीन के पास रह भी क्या सकता है? असहाय व लाचार समाज की जड़ें हिल गयी। अब दिशाहीन होकर किंकर्तव्यविमूढ़-सा खड़ा है।

क्षत्रिय समाज अपनी संजीवनी शक्ति ''क्षात्रशक्ति'' विस्मृत कर अपने पथ से भटका तो सारा संसार अपने मार्ग से भटक गया क्योंकि संपूर्ण मानवता का भाग्य क्षत्रिय समाज से बंधा हुआ है। क्षत्रिय की इस जड़ता जन्य-विकृतियों से सामाजिक ढांचा अस्त-व्यस्त हो गया और सारी व्यवस्थाएँ

छिन्न-भिन्न हो गयी। जब सामाजिक ढांचा अस्त-व्यस्त व सारी व्यवस्थाएँ छिन्न-भिन्न हो गई तो उन्हें दुरुस्त करने के लिए चैतन्य को क्षत्रिय बनकर जगत में आना पड़ता है क्योंकि यहाँ उन्हें क्षत्रिय का ही कार्य करना पड़ता है, इसलिए पूज्य श्री तनसिंह जी का एक क्षत्रिय के घर में अवतरण हुआ।

स्वाभिमानी क्षत्रियों की ऐसी क्षत अवस्था देख पूज्य श्री तनसिंह जी का हृदय वेदना से भर उठा। क्षत्रिय समाज की दुर्दशा ने, उनके गिरते अस्तित्व ने पूज्य श्री तनसिंह जी को व्यथित कर दिया। उन्होंने समाज की पीड़ा के अहसास को जाना, अपने भीतर एक छटपटाहट को देखा, निराशा को जाना, आशा को जाना।

समाज की दु:ख की हालत के प्रति हृदय में उपजी पीड़ा ने ही पूज्य श्री तनसिंह जी को क्षात्र शक्ति के अभ्युदय के लिए प्रेरित किया। समाज के दु:खों का निवारण ''क्षात्र शक्ति'' के अभ्युदय से ही हो सकता है। ''क्षात्र शक्ति'' का अभ्युदय न केवल क्षत्रिय समाज के लिए बल्कि संपूर्ण मानव जीवन व प्राणी मात्र की आवश्यकता है। इसलिए समाज, राष्ट्र व समस्त जगत को बचाने के लिए इस युग में क्षात्र धर्म के समग्र प्रशिक्षण की आवश्यकता महसूस कर 22 दिसम्बर, 1946 को श्री क्षत्रिय युवक संघ की स्थापना की। संघ की स्थापना समय की मांग और जगत की आवश्यकता को देखते हुए ईश्वरीय चाह के अनुसार हुई।

22 दिसम्बर, 1946 को पूज्य श्री तनसिंह जी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ रूपी एक ज्योति जलाई, एक यज्ञ का अनुष्ठान किया, तब से यह ज्योति निरंतर जलती जा रही है, यज्ञ में निरन्तर आहुतियाँ गिरती जा रही हैं, यज्ञ कुण्ड की ज्वालाएं निरंतर धधक रही हैं और यज्ञ में अपना सब कुछ अर्पित करने की एक होड़ लगी हुई है, एक अद्‌भुत परम्परा की शुरुवात हुई है। शाखाओं और शिविरों के माध्यम से समाज, परिवार और राष्ट्र के वातावरण को अमृतमय बनाने के लिए संघ कृत संकल्प है। **(क्रमश:)**

पृष्ठ 4 का शेष

समाचार संक्षेप

अखिल भारतीय क्षत्रिय महासभा का राष्ट्रीय अधिवेशन :- 23 मार्च का शिव-कुंज वैशाली नगर, जयपुर में क्षत्रिय महासभा 1897 का राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ। जिसमें संगठित होकर समाज एवं राष्ट्र हित में कार्य करने पर बल दिया।

होली मिलन समारोह :- श्री क्षत्रिय युवक संघ के केन्द्रीय कार्यालय संघशक्ति भवन, जयपुर सहित विभिन्न संभागों में होली मिलन समारोह के समाचार प्राप्त हुए हैं। संघशक्ति भवन में आयोजित कार्यक्रम में संरक्षक श्री एवं संघप्रमुख श्री का सानिध्य प्राप्त हुआ। झनकार के सहगायन व होली के रंगों से उत्साहपूर्वक होली उत्सव मनाया गया।

महाराणा सांगा जयन्ती समारोह :- (12 अप्रेल) संघशक्ति भवन, जयपुर में महाराणा सांगा जयन्ती का समारोह हर्षोल्लास से मनाया गया। कार्यक्रम का आरम्भ गणेश वंदना तथा यज्ञ से हुआ। तत्पश्चात् वक्ताओं ने महाराणा सांगा के जीवन परिचय के साथ ही उस समय की ऐतिहासिक घटनाओं की चर्चा की। राणा सांगा की वीरता, अदम्य साहस, संगठन की शक्ति, धर्म सहिष्णुता, अद्‌भुत रणकौशल की बातें सुनकर उपस्थित जन समुदाय रोमांचित हो उठा। संस्कार निर्माण में मातृशक्ति की भूमिका पर भी चर्चा हुई। कार्यक्रम के अन्त में संरक्षक श्री माननीय भगवानसिंह रोलसाहबसर ने युवाओं को संस्कृति, सेवा तथा संगठन के मार्ग पर चलने का आह्वान किया। राणा सांगा जयन्ती पर देश भर से अनेक स्थानों पर कार्यक्रमों के समाचार प्राप्त हुये हैं। आगरा में भी भव्य कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

बाधाओं दुविधाओं के बन्धन को तोड़के....

– रेंवतसिंह पाटोदा

बाधा और दुविधा दोनों समानार्थी शब्द लगते हैं लेकिन ये समानार्थी न होकर एक दूसरे के पूरक हैं। बाधा के कारण दुविधा पैदा होती है और इसी प्रकार दुविधा होने पर भी बाधा खड़ी हो जाती है, इस प्रकार ये दोनों परस्पर पूरक हैं। यदि शब्दार्थ के दृष्टिकोण से देखें तो बाधा का अर्थ रुकावट, अड़चन आदि होता है वहीं दुविधा मन की ऐसी स्थिति है जिसके कारण व्यक्ति किंकर्तव्यविमूढ़ होकर क्या करे, क्या न करे की स्थिति में पहुंच जाता है। मन के सामने एक से अधिक विकल्प उपस्थित हो जाते हैं और वह किस विकल्प को अपनाए, इस असमंजस की स्थिति ही दुविधा है। मार्ग में आने वाली बाधा ही मन की ऐसी स्थिति बनाती है और मन की ऐसी स्थिति के कारण ही कार्य में रुकावट पैदा होती है। इस प्रकार ये दोनों स्थितियां एक दूसरे की पूरक बन जाती हैं। पूज्य तनसिंह जी ने परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए लिखा है,

साधन की कमी है, कार्य कठिन है,
मार्ग में माया के अगणित विघ्न हैं।
बाधाओं दुविधाओं के बंधन को तोड़के,
सेवा के मार्ग में जीवन बिछाऊं।
पत्तों से फूलों से नदियों की कल कल से,
गूंजित हो जीवन का संदेश सुनाऊं।।

बाधा और दुविधा दोनों ही व्यक्ति के निर्बाध प्रवाह को रोकती हैं, प्रगति को अवरुद्ध कर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने के संकल्प और प्रयास को बांध देती है, बंधन पैदा कर देती है। पहली पंक्ति में उन बाधाओं और दुविधाओं का प्रकार बताते हुए लिखा है कि पहली बाधा तो साधन की कमी होना है। पूज्य तनसिंह जी जिस संकल्प को धरती पर उतारना चाहते हैं उसके लिए उनके पास साधनों की प्रचुरता नहीं थी बल्कि कमी थी, साधन अपर्याप्त थे। हम भी पूज्य श्री की कृपा से उनके संकल्प को अपना संकल्प मानकर कर्मरत होते हैं तो पाते हैं कि हमारे पास भी उस सागर जैसे संकल्प की ओर बढ़ने के लिए पर्याप्त साधन नहीं हैं। अन्य भौतिक साधनों का तो अभाव है ही, हमारा तो शरीर और मन ही उस संकल्प की पूर्ति के मार्ग पर बढ़ने के लिए उपयुक्त नहीं है, कई बार शारीरिक और मानसिक रूप से हम थक जाते हैं। अनेक बार हमारा मन आगे बढ़ना चाहता है तो शरीर रुक जाता है और अनेक बार शरीर स्वस्थ होते हुए भी मन अड़ जाता है। ना तो उनके संकल्प को समझने के लिए हमारे पास पर्याप्त बुद्धि बल है और ना ही हमारा शरीर दृढ़ता पूर्वक इस मार्ग पर आरूढ़ बना रह पा रहा है और हमारा भाव भी पल पल बदलता रहता है। यही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बाधा है। हम जैसे तैसे हमारे उपलब्ध साधनों को संकलित कर आगे बढ़ना प्रारंभ करते हैं तो पाते हैं कि कार्य भी अति कठिन है। ऐसा कठिन कार्य है जिसका कार्यक्षेत्र कोई जड़ पदार्थ न होकर चेतन प्राणियों से बना समाज है। जिसकी क्रिया प्रतिक्रिया का सहज ही अनुमान लगाना मुश्किल है। जिसके व्यवहार के कोई स्थापित नियम नहीं हैं बल्कि समान परिस्थितियों में भी भिन्न भिन्न समय में भिन्न भिन्न प्रकार की क्रिया प्रतिक्रिया कर सकता है।

संघ का कार्य ऊर्ध्व गति की ओर बढ़ना है जो सदैव ही कठिन होता है। इसका मार्ग फिसलन भरी जड़ता का मार्ग नहीं जिस पर बिना प्रयास के ही व्यक्ति सुख की भ्रमपूर्ण अनुभूति करते हुए फिसलता रहता है बल्कि पूज्य श्री द्वारा प्रशस्त मार्ग तपस्या पूर्वक ऊपर उठने का मार्ग है जिसमें प्रकृति के प्रतिगामी दबाव के साथ साथ स्वयं की जड़ प्रवृतियों से भी अनवरत संघर्ष करना पड़ता है और जहां हर संघर्ष में मिली सफलता आगे आने वाले संघर्ष की पूर्व सूचना मात्र होती है। इस प्रकार पहली बाधा जहाँ साधन की

कमी है वहीं दूसरी बाधा मार्ग की कठिनाई है। कोई दृढ़ संकल्पित व्यक्ति यदि इन दोनों कठिनाईयों को सहन करता हुआ आगे बढ़ना जारी रखता है तो उसके मार्ग में तीसरी बाधा के रूप में स्वयं परमेश्वर की ही माया आकर खड़ी हो जाती है। वह माया उस पथिक को परमेश्वर की चाह से उद्घाटित इस मार्ग के लिए आवश्यक दक्षताएँ अर्जित करवाने के लिए बार बार विपरीत परिस्थितियाँ पैदा करती है और हम हमारे कमजोर संकल्प और अपर्याप्त साधनों के कारण परमेश्वर की इस कृपा से वंचित हो जाते हैं। परमेश्वर की यह माया उस पंथी के समक्ष विभिन्न प्रकार के प्रश्न खड़े कर देती है, उससे पूछती है कि तूं ही क्यों इतनी कठिनाईयों को झेल कर कर्मरत है, तेरे अनेक साथी तो जीवन की ठंडी छांह में सुस्ता रहे हैं। वह कहती है कि आखिर क्या मिलना है इस धन्यवाद रहित कार्य में, जिनके साथ तुम काम कर रहे हो, उनसे तो तुम्हें सदैव प्रताड़ना ही मिलती रहती है, तुम तो उनके साथ बढ़ने को कदम बढ़ाना चाहते हो और वे तुम्हारी तरफ मुस्कुरा कर देख तक नहीं रहे हैं। आखिर तुम्हारा भी तो स्वाभिमान है, कब तक इसे हत करते रहोगे? आखिर तुम्हारा भी तो परिवार है, तुम्हारे संकल्प के कारण उनको क्यों कष्ट भोगना चाहिए, क्या उनका तुम्हारे पर कोई अधिकार नहीं है? कभी वह माया प्रशंसा की चाह पैदा करती है तो कभी उपेक्षा का दंश पैदा करती है। कभी वह सुरक्षा का भय पैदा करती है तो अस्तित्व का कृत्रिम संकट पैदा कर देती है। कभी साथियों की ईर्ष्या का पात्र बनाती है तो कभी स्वयं में साथियों के प्रति ईर्ष्या पैदा कर देती है। कभी किसी कारण वश हमारे अपने अहंकार को चोटिल कर प्रतिक्रिया करवाती है तो कभी हमारे किसी साथी के अहंकार को चोटिल कर बाधा खड़ी कर देती है। माया के विघ्नों की कोई सीमा नहीं है और ना ही इनका कोई पूर्वानुमान लगाया जा सकता। अनेक बार ऐसा आक्रमण होता है कि पथिक हतप्रभ रह जाता है कि माया के फेर में पड़कर उसने स्वयं ने अपने मार्ग में कितनी बड़ी बाधा और दुविधा पैदा कर दी है और यह समझ में आते आते बहुत देर हो जाती है। इसको तो पार केवल परमेश्वर की प्रार्थना से ही पाया जा सकता है इसलिए पूज्य श्री ने इस प्रार्थना के माध्यम से हमें मार्ग सुझाया। बाधाओं और दुविधाओं के बंधन से मुक्त होने के लिए पूज्य श्री ने सेवा के मार्ग पर कदम बढ़ाने का मार्गदर्शन दिया है। सेवा वही कर सकता है जिसमें सेवक का भाव आ जाये। सेवक का भाव स्वयं को अपने सेव्य के समक्ष अकिंचिन बनने को प्रेरित करता है और अकिंचिनता के आगे माया का वेग भी कम हो जाता है। पूज्य तनसिंह जी ने हमारे गौरवशाली समाज को अपने आराध्य की आधार भूमि बनाया, उन्होंने परमेश्वर के पार्थिव स्वरूप को समाज में प्रतिष्ठित किया और उसकी सेवा को परमेश्वर की पूजा के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान की। ऐसे में हर बाधा और उसके कारण उत्पन्न दुविधा अथवा दुविधा के कारण उत्पन्न बाधा को पार पाने के लिए श्री क्षत्रिय युवक संघ के रूप में सेवा के मार्ग में जीवन बिछाने का मार्ग प्रशस्त किया।

अंतिम पंक्ति में उन्होंने सेवा का स्वरूप या परिभाषा को प्रकृति के उदाहरण के द्वारा समझाया है कि सेवा वास्तव में होती क्या है, सेवा का स्वरूप कैसा होता है? उन्होंने लिखा, 'पत्तों से फूलों से नदियों की कल कल से गुंजित हो जीवन का संदेश सुनाऊं।' क्या संदेश है पतों का, क्या कहते हैं फूल, नदियों की कल कल से जीवन का कौनसा संदेश गुंजायमान हो रहा है? परमेश्वर का प्रकट स्वरूप यह प्रकृति इनके माध्यम से हमें क्या संदेश दे रही है? ये ऐसे प्रश्न हैं जिनके उत्तर सेवा की परिभाषा को स्पष्ट कर देते हैं, संघ के मार्ग को भी स्पष्ट कर देते हैं। पेड़ की टहनी पर पल्लवित होने वाला पत्ता इसलिए पल्लवित नहीं होता कि उसके बिना यह प्रकृति बांझ हो जाएगी बल्कि इसलिए पल्लवित होता है कि उसका पल्लवित होना, विकसित होना, अपने पर्णहरित के सहयोग से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा पौधे का भोजन बनाना और फिर एक अवधि के बाद सूखकर, झड़कर उसी पेड़ के नीचे मिट्टी में मिलकर खाद बनकर नये

पत्ते के पल्लवन की भूमिका तैयार करना उसका स्वभाव है और उस स्वभाववश वह संसार से किसी भी प्रकार की अपेक्षा के बिना अनाम जीवन जीकर अपने कर्तव्य के लिए ही अपने जीवन की इतिश्री कर नवजीवन का पथ प्रशस्त करता है, यही सेवा है। पुष्प टहनी पर खिलता है, पूर्ण यौवन को प्राप्त कर अपनी सुवास से आस पास के वातावरण को सुगंधित बनाता है, पराग कणों को प्रसारित कर बीज के बनने की संभावनाएं पैदा करता है और फिर फल में परिवर्तित होकर अथवा यूं ही झड़कर उसी पेड़ के लिए खाद बनने के लिए अपनी जीवन लीला समाप्त कर देता है। उसको इस बात की चिंता नहीं होती कि उसकी सुवास से कौन लाभान्वित हुआ और कौन नहीं हुआ, उसकी सुवास को सराहा गया या नहीं गया, संसार ने उस पर संज्ञान लिया या नहीं लिया बल्कि वह तो अपना दायित्व पूरा कर संसार से विदा ले लेता है। पूज्य श्री ने अपनी एक अन्य प्रार्थना में ऐसा ही उल्लेख करते हुए लिखा है–

वन में फूल खिले, खिलकर जगत में प्रेम बरसाते,
हंसते हैं हंसी में फिर हस्ती को मिटा जाते।
अंधेरे में पड़े इस ज्ञान से मुझको सजा देना।।

खिलना, प्रेम बरसाना और फिर हंसते हंसते हस्ती को मिटा जाना ही फूल का संदेश है जो प्रकृति द्वारा हमारे लिए सेवा के मार्ग पर प्रशस्त होने के लिए दिया गया है। अंतिम उदाहरण पूज्य श्री ने नदी का दिया है। कल कल करती नदी का अस्तित्व ही अपने आस पास के क्षेत्र को सरसब्ज करते हुए निरंतर अपने गंतव्य की तरफ बहते जाना है, वह अपनी उस सार्थकता के बदले कुछ चाह नहीं रखती बल्कि शांत भाव से जब बहती है तो अपनी कल कल से सृजन का संदेश देती रहती है। प्रकृति के इन तीनों उदाहरणों में अपेक्षा रहित कर्तव्य पालन का संदेश है और यही सेवा है। यही निष्काम कर्मयोग है। हमारे जीवन में ऐसा ही सेवा भाव हमारी चेतना को ऊँचाइयों की और ऊर्ध्वगामी प्रवाहित कर सकता है और यही धर्म का मार्ग है जिसका इस प्रार्थना के प्रारंभ में उल्लेख किया गया है।

हमारे लिए चुनौती यह है कि क्या हम साधन की कमी होते हुए भी, कार्य के कठिन होते हुए भी और माया के अगणित विघ्न होते हुए भी बाधाओं दुविधाओं के बंधन को तोड़कर सेवा के मार्ग में जीवन बिछा पायेंगे? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें अपने आप से ही पूछना पड़ेगा कि क्या मेरा पूज्य श्री द्वारा प्रदत्त प्रक्रिया में पूर्ण विश्वास है कि यह प्रक्रिया मेरे कल्याण के लिए ही अस्तित्व में आई है, क्या मेरा पुरुषार्थ परिणाम के लिए अधीर हुए बिना निरंतर पूज्य श्री द्वारा समाज को आधार बनाकर प्रशस्त की गई प्रक्रिया में सक्रियता से बने रहने के लिए है? यदि हमारा उत्तर हाँ में है तो हम पूज्य श्री से यही प्रार्थना करें कि वे हमारी इस हां को सदैव बनाये रखने के लिए अपना कृपा पात्र बनाये रखें और यदि ना है तो हम प्रार्थना करें कि उनकी कृपा से हमारे में वह पुरुषार्थ जागृत हो जो हमारी ना को हां में बदल देवे। हमारी प्रार्थना और पुरुषार्थ दोनों के लिए हमें पूज्य श्री की कृपा का आकांक्षी बने रहना चाहिए।

●

कभी असफलताएँ भी मिली हैं, लेकिन मेरी सफलताओं के मुकाबले में वे कुछ भी नहीं हैं। कुछ असफलताओं का होना स्वाभाविक है, तब चिन्ता क्यों करूँ? सत्य तो यह है कि कुछ असफलताएँ परमावश्यक भी हैं। सही स्थिति का मूल्यांकन करना हमें नहीं आता और इसीलिए हम अपने दुर्भाग्य की चोटों पर चीखते–चिल्लाते हैं और सौभाग्य की सर्वथा उपेक्षा करते हैं।

– पूज्य तनसिंह जी

आज़ादी का परवाना महाराणा प्रताप

– डॉ. कमल सिंह बेमला

भारत माँ की धरा पर समय-समय पर कई नरपुंगवों ने जन्म लिया है। उनमें वीर शिरोमणि प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है। अतीत मनुष्य का बहुत बड़ा सहारा है, अतीत में झांक कर अपना, समाज का और राष्ट्र का मार्ग प्रशस्त करता है। इसका अनुपम उदाहरण है आज़ादी के मतवाले, प्रेरणा पुंज और अद्वतीय योद्धा महाराणा प्रताप। पाली शासक की सुपुत्री जयवंता देवी सोनगरा की कोख से रविवार ज्येष्ठ सुदी तृतीया संवत् 1597 (9 मई, 1540 ई.) में जन्म लेने वाले उदीयमान नक्षत्र से अपने पुरखों बप्पा रावल, हमीर, महाराणा कुंभा, महाराणा सांगा, पिता श्री उदय सिंह के उज्जवल व्यक्तित्व से प्रेरणा ली और दृढ निश्चय किया कि वह कभी आतताइयों के आगे झुकेगा नहीं, संघर्ष कर उनसे लोहा लेता रहेगा, चाहे राज्य खोकर उसे वन में ही क्यों न तृणचर बनकर भटकना पड़े। इसी प्रण को लेकर उसने राष्ट्र में एक नई ज्योति जगाई, जिसके उजाले ने समय-समय पर भारत माँ के सपूतों को स्वाधीनता की राह दिखाई। भक्तिमती मीराबाई प्रताप की बड़ी माँ थी। प्रताप को आरम्भिक अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा उनकी माता और राठौड़ जयमल ने दी थी। उनका राजतिलक गोगुन्दा में महादेव जी की बावड़ी पर 28 फरवरी, 1572 को हुआ। एक षड़यंत्र के तहत उनका छोटा भाई जगमाल गद्दी पर बैठ गया था पर मेवाड़ के स्वाभिमानी सरदारों और जांबाज नायकों ने जगमाल को हाथ पकड़ गद्दी से उतार संकटों से घिरे नाजुक वक़्त को देखते हुए बड़े काबिल पुत्र प्रताप को मेवाड़ की रक्षा के लिए गद्दी पे बिठाया। जिससे जगमाल अकबर से जाकर मिल गया था।

उस आदर्श पुरुष के जीवन पहलुओं पर दृष्टिपात करें तो त्याग, निष्ठा व देशभक्ति के समुज्ज्वल बिम्ब उभर कर हमारे सामने आते हैं। लेखनी उठाते हैं तो उस विरात्मा के यश मंडित शब्द चित्रों का अंबार लग जाता है। अपने देश व कुल मर्यादा की रक्षा के लिए उसने राजगद्दी को त्याग कर भौतिक सुख-सुविधाओं को तिलांजलि दे दी। जन-जन से नाता जोड़कर संगठन की भावना जागृत की। परिणामतः बड़े-बड़े उमरावों से लेकर वन में भटकने वाले भीलों ने आजादी के पुनीत यज्ञ में सम्मिलित होकर उन्होंने हवन में धृत का काम किया। एक ओर कर्तव्यपरायणता, समता, एकता और राष्ट्रीयता का शंखनाद करने वाले प्रताप ने अपने योद्धाओं का कुशल नेतृत्व किया तो दूसरी ओर मेवाड़ के सपूतों ने अपने रक्त से मेवाड़ माटी के कण-कण को सींचकर गौरवमय संस्कृति को जीवित रखने में अभूतपूर्व योगदान दिया। गोगुंदा, हल्दीघाटी, कुंभलगढ़, दिवेर (राजस्थान का मैराथन) और चावंड को अपनी कर्मस्थली के बिंदु बनाकर मेवाड़ के चप्पे-चप्पे को अपने पसीने से सींचा और समग्र हिंद के जन-जन को अथाह बल प्रदान कर वह उनके हृदय में बस गया।

पग-पग भमया पहाड़, धरा छोड़ राख्यो धरम।
महाराण अर मेवाड़, हृदय बसिया हिंद रे।।

उस मर्यादा पुरुष ने अपने आदर्शों को बनाए रखने के लिए अकबर के आगे सर नहीं झुकाया। अपना मस्तक ऊपर उठाए स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ता रहा। सभी राजा महाराजाओं ने अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली और अपने धर्म से डिग गए परंतु प्रताप अडिग रहा। उनकी आत्मचेतना व स्वाधीन भावना को सर्वप्रथम कविवर पृथ्वीराज राठौड, जो प्रताप का मौसेरा भाई लगता था, ने दर्शाया है-

जासी हाट बात रहसी जग, अकबर ठग जासी एकार।
रह राख्यो क्षत्री धर्म राणै, सारा ले बरतो संसार।।

सत्य सत्य है और सत्य की हमेशा जीत हुई है। अकबर ने बहुत प्रलोभन दिए, कई संधि प्रस्ताव भेजे जिनमें

सितम्बर, 1572 में जलाल खां कोरची, जून, 1573 में कुंवर मान सिंह, अक्टूबर, 1573 में जयपुर राजा भगवान दास और दिसम्बर, 1573 में चौथा प्रस्ताव राजा टोडरमल के द्वारा भेजा पर राणा ने मुगलों के सामने दासता स्वीकार करना सीखा न था। युद्ध अनिवार्य था, हुआ। जून, 1576 में मानसिंह ने गोगुन्दा पर कब्जा किया जिसे राणा ने सितम्बर, 1576 में पुनः अपने कब्जे में किया। प्रताप ने घोर संघर्ष कर इसको फिर से सिद्ध कर दिया। इस तरह 1576 से 1584 तक आक्रमण प्रत्याक्रमण चलते रहे। महाराणा ने चावंड को अपनी नई राजधानी बनाया और अधिकांश मेवाड़ के भाग पुनः विजय किये। जीवन भर संघर्ष करने के बाद भले ही उसे पूरा राज्य नहीं मिला परंतु आत्मसम्मान की रक्षा हो गई, कुल गौरव बना रहा, हिंदू धर्म और संस्कृति जीवित रहे, परिणामतः उसके वंश की पावन धारा आज दिन तक बहती रही है जबकि मुगलों का विशाल सामाज्य ध्वस्त हो गया। प्रताप की कीर्ति भारत, बल्कि संपूर्ण विश्व में फैल गई और हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत बन गए। भारत के स्थानीय इतिहासकारों ने ही नहीं, जेम्स टॉड जैसे विदेशी इतिहासकारों ने भी प्रताप के आदर्श को अपनी लेखनी में डालकर उस विरात्मा को देशवासियों के लिए रोशनी का पुंज होना स्वीकारा। साहित्यकारों को अटूट खजाना मिल गया। राजस्थान, गुजरात, दक्षिण बंगाल, पंजाब, उड़ीसा आदि भारत के कोने-कोने में प्रताप के यशस्वी जीवन पर अनेकों पुस्तकें लिखी गई और प्रताप भारतीय साहित्य के राष्ट्र देवता के रूप में उभर कर हमारे सामने आये। अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने वाले स्वतंत्रता सेनानियों ने निरंतर विफलता, निराशा को झेलते हुए प्रताप के आदर्श को अपनाया और संघर्ष करते रहे। निराश होने वाले स्वतंत्रता सेनानियों का जब साहस टूट जाता तब हमारे देश के आजादी के सूत्रधार लोकमान्य तिलक, महात्मा गाँधी, वीर सावरकर, सुभाष आदि स्वतंत्रता के सच्चे पुजारी के जीवन के उदाहरण देकर उन्हें प्रोत्साहित करते। महान् क्रान्तिकारी गणेश शंकर विद्यार्थी ने भी प्रताप नामक अखबार निकाल कर आजादी की अलख जगाई, भगवद्गीता की तरह प्रताप का जीवनवृत उनके लिए प्रेरक बन गया। अंततः भारत माँ की गुलामी की बेडियों को तोड़ने में उन्हें सफलता मिली। सरदार वल्लभभाई पटेल ने राजस्थान राज्य के उद्घाटन भाषण के समय ठीक ही कहा था कि- ''आज हम प्रताप के स्वप्न को साकार कर रहे हैं'' स्वतंत्र होने के बाद भी आज प्रताप के आदर्श मूल्यों की प्रासंगिकता बनी हुई है। हमारा देश आजाद हुआ है परंतु देश पर गुलामी का कोहरा छाया हुआ है। राजनीतिक तंत्र भ्रष्टाचार का अखाड़ा बना हुआ है। प्रशासन की सारी व्यवस्था लड़खड़ा रही है, मानव मूल्य में तेजी से गिरावट आ रही है। त्याग की भावनाएं लुप्त हो रही हैं, मानव कोरा अर्थ के पीछे भागता हुआ नजर आ रहा है, आतंकवादियों का आतंक बढ़ रहा है, संस्कृति के पहलू धूमिल हो रहे हैं, ऐसे में प्रताप के आदर्शों पर चलकर देश, समाज और मानव धर्म की रक्षा करने का संकल्प लेना है। विशेषतः नई पीढ़ी को साहस और हिम्मत से काम लेना है। समर्पित भाव से कार्य कर राष्ट्र को मजबूत बनाना है। सत्य के मार्ग पर चलकर फिर से आदर्श मूल्यों को स्थापित करना है। अत्याचार, भ्रष्टाचार और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाकर स्वार्थी तत्वों को जड़-मूल से खत्म करना है और भाईचारे की भावनाएँ फिर से जगानी हैं। इसके लिए हमें प्रताप के पदचिह्नों पर चलकर संघर्ष व त्याग करने का बीड़ा उठाना है और सुसंगठित होकर एक ऐसी मशाल जला देना है जिसके प्रकाश से भारत के नागरिकों में नव चेतना जागृत हो जाए। राणा प्रताप 'अकबर की शरण में जाने से पहले मुझे मौत आ जाए' यही प्रार्थना एकलिंगजी से आजन्म करते रहे और सिर हथेली पर लेकर आधे से अधिक मेवाड़ अकबर से वापस जीत लिया। पर नियति का खेल, यो्द्धा महाराणा प्रताप को ईश्वर लम्बी जिंदगी नहीं दे सके। अपने अंतिम दिनों में एक ओर आधा मेवाड़ मुगलों की जंजीरों से मुक्त करने का आनंद तो दूसरी ओर राजपूतों की प्रतिष्ठा राजधानी ''चितौड़'' मुक्त न कर पाने का दुख, ऐसी दुविधापूर्ण अवस्था महाराणा प्रताप की थी। इसलिए आज भी मातृभूमि पर जान न्योछावर करने वाले हर हिंदुस्तानी के जेहन से यही

आवाज उठती है कि ''काश! महाराणा प्रताप आपके पास जिंदगी के थोड़े दिन और होते।'' मेवाड की आन और शान बढ़ाने में महाराणा सांगा का अमूल्य योगदान रहा। मातृभूमि की रक्षा करते-करते उनके शरीर में इतने जख्म हुए की जिस्म का कोई भी हिस्सा बिना जख्म का न रहा। इस वस्तुस्थिति का उस महान् योद्धा को बड़ा गर्व था। उनके बाद उदयसिह आये उस समय अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया, रानियों ने जौहर किया, राजपूत केसिरया बाना पहन जयमल पत्ता के नेतृत्व में जान की परवाह किये बगैर दुश्मन पर टूट पड़े और शाका किया। अकबर ने चितौड़ में 40,000 निर्दोष लोगों का कत्लेआम कराया। राणा उदय सिंह ने चितौड़ छोड़ 1559 में अक्षय तृतीया के दिन उदयपुर बसाया। उनके बाद अकबर की विशाल सेना से मुट्ठीभर जिगरबाजों के बल पर प्रताप ने जिस निडरता और आत्मविश्वास के साथ युद्ध किया, उसकी मिसाल इतिहास में कहीं नहीं। मुगलों के साम्राज्य को दरार पहुँचाना हिंदुस्तानियों के आपसी द्वेष के कारण उस वक्त मुश्किल बन गया था। एक और एक के बाद एक हिंदुस्तानी राजा अकबर के दास बनते गए लेकिन इस प्रवाह को खंडित किया और स्वाभिमान, स्वतंत्रता और मातृभूमि के प्रेमज्योत को सदा दिलों में समाए और जलाये रखने वाले राणा प्रताप को परीक्षा के कठिन दौर से गुजरते हुए अपनों की गद्दी और दुश्मनों के सामने घुटने टेकने वाले देशद्रोही राजाओं का भी मुकाबला करना पड़ा। अपने बच्चों और धर्मपत्नी अजबदे पंवार को दर-दर की ठोकरें खाकर जीवन यापन करने से उनका तन विदीर्ण हो गया था, फिर भी उनके मन को अकबर का आधिपत्य स्वीकार करने का विचार कभी नहीं छू सका। मेवाड़ के इतिहास में 'ना भूतो ना भविष्यति' ऐसा हल्दीघाटी का युद्ध 18 जून, 1576 ई. को हुआ उसमें मेवाड़ की 22,000 की सेना मुगलों की 80,000 की सेना से अपूर्व साहस से लड़ी। राणा प्रताप लड़ते-लड़ते जख्मी हुए तो उनके प्रिय चेतक घोड़े ने घायल होते हुए भी रणक्षेत्र से उन्हें सुरक्षित बाहर निकाला। प्रताप ने युद्ध में हाथी पर सवार मानसिंह पर भाले से शक्तिशाली प्रहार किया था पर मानसिंह हौदे में छुप गया और हाथी ने सूंड में तलवार से चेतक के पिछले पैर पर वार किया था। अपने प्राणों की आहुति देकर अंत में घायल अवस्था में 22 फुट नाला कूदकर चेतक ने अपने स्वामी की जान बचाई। मनुष्य से ज्यादा इंसानियत और ईमानदारी उस मुक जानवर ने दिखाई, मातृभूमि की शान बढ़ाई। चेतक की समाधि आज भी हल्दीघाटी में बनी हुई है। इसी तरह उनका हाथी रामप्रसाद दुश्मनों के कब्जे में जाने के बाद भी भूखा मर गया पर अकबर का चारा नहीं खाया और अकबर को इसका मलाल जिंदगी भर रहा। बड़ीसादड़ी के राजराणा झाला मन्ना ने वक्त की नजाकत देखते हुए प्रताप को युद्ध भूमि से निकाला और उनके छत्र चंवर धारण किये और युद्ध में अप्रतिम शौर्य का परिचय देते हुए अपने प्राणों को उत्सर्ग किया। इसी तरह प्रताप की सेना के सेनापति हकीम खाँ सूर, ग्वालियर के नरेश राजा रामशाह तँवर और उनके तीन पुत्रों शालिवाहन, भवानी सिंह, प्रतापसिंह और एक पौत्र ने भी अपना बलिदान दिया। इन सभी वीरों की छतरियाँ रक्त तलाई, खमनोर में बनी हुई है।

अकबर का दरबारी कवि दुरसा आड़ा ने भी 76 दोहे बिना डरे अकबर को सुनाए जिसमें राणा की वीरता और स्वाभिमान की चर्चा थी। हल्दीघाटी युद्ध के बाद राणा प्रताप दुगुने उत्साह से नई सेना का गठन करने में लग गए। इस वक्त उनका साथ भील युवक योद्धाओं ने दिया। राणा पूंजा सोलंकी ने अपनी सेना के साथ राणा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने की शपथ ग्रहण की। राणा प्रताप ने भी प्रतिज्ञा ली कि चितौड़ जब तक मुक्त नहीं होगा तब तक जमीन पर सोना और पत्तल पर खाकर सामान्य सैनिक का जीवन जिऊँगा। प्रताप जंगल-जंगल, पहाड़- पहाड़ पर घूमते रहे, कभी आवरगड कमलनाथ, कभी कोलियारी कभी मायरे की गुफा, कभी मचिंद के राणा चौरा। घास की रोटी खाई पर झुके नहीं। मातृभूमि के प्रेम से आकंठ भरे हुए रणबांकुरों की सेना का गठन करते-करते राणा प्रताप सुख-दुख सब भूल बैठे थे। उनका पुत्र अमर बड़ा हो चला था, पिता की तरह शौर्य, धैर्य, साहस इत्यादि गुणों से वह ओतप्रोत था। जब

भी राणा अपने पुत्र को देखते थे तो उन्हें आत्मबल प्राप्त होता था। अपना लक्ष्य अमर सिंह अवश्य प्राप्त कर लेगा और मातृभूमि की सेवा करेगा, ऐसा उन्हें आत्मविश्वास बनने लगा था। युवक भील योद्धा समर सिंह के प्रयास से संगठित भील सेना, अमर का साथ और भाई शक्ति सिंह की वापसी से राणा प्रताप के मेवाड़ मुक्ति अभियान को नया बल मिला। राजस्थानी बड़े-बड़े राजपूत योद्धा हुए, पर महाराणा प्रताप के समान धीर-वीर, राष्ट्र प्रेमी और स्वाभिमान दूसरा कोई नहीं हुआ। सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अकबर जैसे शक्तिशाली सम्राट से युद्ध करना और वह भी अपने ही भाई-बंधु अकबर की सत्ता स्वीकार कर चुके थे और खजाना खाली था, ऐसी अवस्था में भामाशाह ने चूलिया गाँव में महाराणा को उनका खजाना सौंपा, महाराणा प्रताप ने मुट्ठीभर स्वामीनिष्ठ देशप्रेमी साथियों के बल पर अपने प्रचंड विश्वास, असीम साहस तथा प्रखर देशभक्ति के जोर पर अकबर से युद्ध किया।

आजादी के दीवाने मेवाड़ी वीरों ने हल्दीघाटी और दिवेर युद्ध भूमि में अपने रणकौशल से वह पराक्रम दिखाया कि स्वयं अकबर का इतिहास लेखक अबुल फजल तो इस युद्ध को देखकर चकित रह गया था। अकबर नामे में उसने लिखा कि, ''यहाँ तो योद्धाओं ने जान सस्ती व इज्जत महंगी कर दी है।'' इसी प्रकार अंग्रेज इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड ने भी युद्ध के बारे में कहा है। ''यूरोप में जो स्थान थर्मोपॉली का है उससे भी उज्जवल व ऊपर भारतीय इतिहास में हल्दीघाटी का है।'' हल्दीघाटी नाम से प्रसिद्ध यह समूचा स्थान पहाड़ियों से घिरा हुआ है और तंग दर्रेनुमा रास्ता है जिसकी मिट्टी हल्दी जैसी पीलापन लिए हुए चंदन-सी वंदनीय है। प्रताप में इतनी ताकत थी कि उन्होंने दिवेर के युद्ध में बहलोल खान जो सात फुट का था उसको घोड़े और जिरहबख्तर सहित आधा एक ही वार में चीर दिया था। प्रताप में मानव मूल्य कूट-कूट कर भरे थे, खानखाना रहीम के रानियों के डोले को जब अमरसिंह ने शेरगाँव में घेर लिया था तो प्रताप ने नारी इज्जत को ससम्मान पुनः उनको अमर को फटकार लगाते हुए भेजा तो कवि हृदय रहीम की आँखों में श्रद्धापूर्वक पानी आ गया और कहा-

धर्म रहसी, रहसी धरा, खुट जासी खुरसान।
अमर विसंभर उपरे, राख नहंचो राण।।

अर्थात् जब तक धर्म रहेगा, धरा रहेगी, मुगल भी एक दिन खत्म हो जाएँगे पर प्रताप का यश हमेशा कायम रहेगा।

प्रताप ने चावंड में एक गाय को बचाने के लिए एक शेर को मारा था जिससे उनकी आँत में घाव हो गया था, एक बार धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाते वक्त वो घाव पुनः खुल गया जिससे अत्यधिक रक्तस्राव होने से प्रताप की मृत्यु माघ शुक्ल एकादशी संवत् 1640 (19 जनवरी, 1597 ई.) को हुई। उनकी आठ खंभों की देवली (छतरी) बांडोली के केजड़ तालाब पर बनी हुई है। और चावंड में महलों के भग्नावशेष हैं और प्रताप का बनवाया हुआ चामुंडा माता का मंदिर भी है। कहते हैं कि प्रताप की मृत्यु पर उनका कट्टर दुश्मन अकबर भी रोया था। कवि ने कहा है-माई एहड़ा पूत जण, जेहड़ा राण प्रताप। अकबर सुतो उजके, जाण सिराणे सांप।।

धन्य है! वह माँ जिसने राणा प्रताप जैसे देश प्रेमी पुत्र को जन्म दिया। धन्य है! पन्नाधाय जिसने अपने पुत्र चंदन का बलिदान देकर बालक उदयसिंह की रक्षा की, जिनसे हमें वीर प्रताप जैसा नायाब रत्न मिला जिसने महलों के सुखमय जीवन का त्याग कर मातृभूमि की रक्षा के लिये जीवनपर्यन्त जंगलों में रहकर मुगलों से संघर्ष किया, उस स्वतंत्रता के पुजारी प्रताप के स्मरण मात्र से आज भी भुजायें फड़क उठती हैं। धन्य है! वह मेवाड़ भूमि जिसने गुलामी की जंजीरों से मातृभूमि को आजाद कराने के लिए सदैव तत्पर रहने वाला सुपुत्र दिया। इस धरातल पर जब तक वीरों की पूजा होती रहेगी तब तक राणा प्रताप (राणा कीका) का उज्ज्वल व अमर नाम जनमानस स्वातंत्रता प्रीति, देशाभिमान निरंतर पढता रहेगा। स्वतंत्रता के दीवानों के लिए चित्तौड़ तीर्थ और प्रताप देवता है।

●

इनके बिना काम न बनेगा

– महेन्द्र सिंह गूजरावास

सूर्यदेव नित्य प्रतिदिन अपने नियत समय पर उदय और अस्त होते हैं; कहाँ और कितनी किरणें उड़ेलनी हैं, सब कुछ निश्चित। जल हमेशा उच्च धरातल से निम्न धरातल की ओर बहता है; हर जगह, हर परिस्थिति में, अपना तल बराबर रखने का नियम कभी नहीं भूलता। हवा हमेशा उच्च दाब से निम्न दाब की ओर प्रवाहित होती है, कभी भी नियम का उल्लंघन नहीं होता। सूर्य, चंद्र, जल, पृथ्वी, वायु ही नहीं, ब्रह्माण्ड के सभी ग्रह नक्षत्र अपने निर्धारित मार्ग पर अपने-अपने नियमों का पालन करते हुए पूर्ण अनुशासन के साथ चलायमान हैं।

जगत में अनुशासन के साथ नियमों की पालना ही मुख्य तत्त्व है। जो ब्रह्माण्ड में है वो पिण्ड में है, फिर चाहे कोई संस्था हो या व्यक्ति। यह बात सभी जगह, समान रूप से लागू होती है। महर्षि पतंजलि का अष्टांग योग हो या पूज्य श्री तनसिंह जी का अष्टसूत्रीय कार्यक्रम, यदि उत्तरोतर कदम-दर-कदम, सीढ़ियाँ चढ़नी है तो नियम ही महत्त्वपूर्ण हैं और इसीलिए संघ शिक्षण की सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी शाखा में, नियमितता और निरन्तरता की बात सबसे पहले और जोर देकर कही जाती है।

संघ के शिक्षण में अनुशासन के साथ नियमों की पालना हर जगह गहराई के साथ मौजूद है। छोटी से छोटी बात हो, चाहे पंक्ति में चलना, बैठना हो या घट की व्यवस्था हो, कब जगना, कितना विश्राम। कब मौन और कब, कहाँ और कितना बोलना। हर जगह नियम और अनुशासन।

किसी संस्था का प्राण, उसका अनुशासन है। श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य, लोक सम्पर्क से लोक शिक्षण और लोक शिक्षण से होता हुआ लोक संग्रह तक जाता है। जहाँ लोक शिक्षण की बात हो वहाँ नियम और अनुशासन आवश्यक तत्त्व हैं। संघ के स्वयंसेवक, शाखाओं और शिविरों से इस तत्त्व को ग्रहण कर अपने जीवन में उतारने का प्रयास करते हैं। इस तत्त्व का बाहुल्य कार्य की मात्रात्मक अभिवृद्धि कर लक्ष्य को नजदीक ले आता है, वहीं इसकी कमी लक्ष्य को और आगे खिसका देती है। संघ का प्रत्येक कार्यक्रम इस बात को समझाने का प्रयास है कि इस बात को जानना और मानना ही एकमात्र विकल्प है। क्योंकि इनके बिना न काम बनेगा।

जग का काज नियम से चलता।
अनुशासन बिना काम नहीं बनता।।

●

मेरे समाजकी काल रात्रि में सूर्य उगा है,
द्वेष दम्भ का भूत भयंकर तभी भगा है।
झूठें जग में इक संघ बन्धु बिन कौन सगा है,
तन मन धन जीवन एक ही रंग रंगा है।
फर फर कर फहराता कहता जियो शान से, मरो मान से।
जीवन पतंग बलि होता है तब शान से।।

– पूज्य तनसिंह जी

आत्म सुधार व लोक व्यवहार

– रतन कँवर सेतरावा

यह जादुई बात है हम में सीखने की गहरी ललक हो, लोगों का दिल जीतने और उन्हें प्रभावित करने की प्रबल इच्छा हो। इस हेतु हम लोक व्यवहार के कुछ सामान्य उपाय अपना सकते हैं। हमारे व्यवहार के ये प्रयोग आत्म सुधार की तरफ हमें सदैव अग्रसर करेंगे। जैसे–

श्रेष्ठ साहित्य पढना :– हमें संघ साहित्य, महान् दार्शनिकों, विचारकों व बुद्धिजीवियों द्वारा लिखी पुसतकें, उनकी जीवनियाँ आदि पढना चाहिए। स्वाध्याय की यह आदत हमारे एक नई ऊर्जा, शक्ति का संचार करती है जैसे– चिन्तन, मनन, अनुकरण। पढ़ते समय बीच में रुककर हर सुझाव के बारे में सोचें, खुद से पूछें कि 'मैं इसे अपने जीवन में कब और किस तरह लागू कर सकता हूँ।' निःसन्देह इस तरह के प्रश्न हमारी भीतरी परतें खोलने में सहायक सिद्ध होंगे।

हमें अच्छा साहित्य एक बार सरसरी तौर पर पढने के बाद इसे दुबारा भी पढ़ना चाहिए। खुद को लगातार याद दिलाते रहें कि ऐसा करने से हमारे सामने सुधार की बहुत सारी सम्भावनाएँ खुल जाएँगी क्योंकि लगातार पढ़ने और उस पर अमल करने से ही हम इन सिद्धान्तों का लाभ उठा सकते हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि सिद्धान्त तभी काम करते हैं जब इन पर अमल किया जाए, इसके अतिरिक्त और कोई दूसरा उपाय नहीं है।

महत्त्वपूर्ण बनने की इच्छा :– हर व्यक्ति में महत्त्वपूर्ण बनने की या कुछ बेहतर करने ही प्रबल इच्छा होती है। विलियम जेन्म ने कहा था– 'हर मनुष्य के दिल की गहराई में यह लालसा छुपी होती है कि उसे सराहा जाए।' अतः यह हमारी आदत में आ जाए कि जब भी हम किसी को बेहतर तरीके से काम करता हुआ पाएँ तो दिल खोलकर उसकी प्रशंसा करें। हमारा ऐसा करना उस व्यक्ति को उत्साहित करेगा जिससे भविष्य में उसके काम की गति व गुणवत्ता दोनों बेहतर होंगे। साथ ही हम एक उदार हृदय के स्वामी भी बन पाएंगे, जो सदैव गुणग्राही बनकर उन्मुक्त कण्ठ से सराहना करता है। सच्ची सराहना हमें प्रेम का पात्र बनाती है परन्तु याद रखना चाहिए कि प्रशंसा व चापलूसी में अन्तर है। सराहना या प्रशंसा सच्चे भाव के साथ निःस्वार्थ रूप में की जाती है और चापलूसी स्वार्थपूर्ण व झूठी होती है। इसलिए कहा जाता है कि हमें चापलूस दोस्तों ये बचकर रहना चाहिए। आज सच्ची तारीफ दुर्लभ हो गई है।

अंग्रेजी साहित्याकार इमर्सन ने कहा था कि– 'हर व्यक्ति मुझसे किसी न किसी बात में बेहतर होता है और मैं उसकी वह बात सीख लेता हूँ।' इसलिए हम जब भी अच्छा भोजन खाएं, किसी उदार हृदय के कारण छोटी सी भी सुविधा भोगें, कुछ अच्छा देखें, अच्छा सुनें तो निःसंकोच होकर मुस्कराहट के साथ तारीफ जरूर करें। हम पाएँगे कि लोग हमारे शब्दों को अपने मन की तिजोरी में संभाल कर रखेंगे और हमेशा उन्हें दोहराते रहेंगे जो हमने उन्हें कहा। हम स्वयं भले ही भूल जाएँ पर वे नहीं भूल पाएंगे।

आलोचना करने से बचें :– सामान्यतः हमें दूसरों की आलोचना करने से बचना चाहिए क्योंकि जब निंदा या शिकायत हमारे स्वभाव का एक अंग बन जाती है तो यह हमारी मानसिक शांति को भंग कर देती है। लोगों की आलोचना करने की बजाय हमें उन्हें समझने की कोशिश करनी चाहिए। हमें यह पता लगाना चाहिए कि जो काम वे करते हैं, उसे वे क्यों करते हैं? यह आलोचना करने से ज्यादा रोचक व लाभदायक होगा। इससे हमारे

(शेष पृष्ठ 23 पर)

जीवन का लक्ष्य

– राजलक्ष्मी, लूणू

क्या आप लोगों ने कभी इस बात पर विचार किया है कि मानव जीवन का लक्ष्य क्या है? आपने अपने लिए क्या मंजिल चुनी है। हजारों लोगों ने इस शब्द को अनेक बार दोहराया होगा। कभी आपने भी इसे दोहराया होगा, सुना होगा। परन्तु क्या आपने कभी सोचा है कि इन शब्दों में जीवन का गूढ़ रहस्य छिपा है।

जब जीवन के लक्ष्य के बारे में लोगों से पूछा जाता है तो लोगों के उत्तर भौतिक जगत से सम्बधित होते हैं, जैसे– विद्यार्थी वर्ग से जब इस बारे में पूछा जाता है तो वे अपने पढ़ने का उद्देश्य प्रायः रोजगार से संबंधित बताते हैं। कोई शिक्षक बनना चाहता है तो कोई वकील, डॉक्टर, इन्जिनीयर, व्यापारी आदि बनना ही अपना उद्देश्य बताते हैं।

अधिकांश लोग बिना लक्ष्य पर विचार किये जीवन व्यतीत करने में लगे हुए हैं। भारतीय संस्कृति में मानव मात्र के जीवन लक्ष्य को चार पुरुषार्थों में विभाजित किया है– धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन सब का हमारे जीवन में बड़ा महत्त्व है। इन पर चलकर हम अपना जीवन तो सुख पूर्वक जी ही सकते हैं और प्राणी मात्र का कल्याण भी कर सकते हैं। लेकिन वर्तमान समय में इन पर चर्चा करने के लिए किसी के पास समय नहीं है बल्कि कुछ महानुभाव तो ऐसे हैं जिन्होंने अपना निजी लक्ष्य भी तय नहीं किया।

आचार्य विनोबा भावे ने मैट्रिक में पढ़ने वाले एक विद्यार्थी से पूछा– क्यों जी आगे तुम क्या करोगे? उसका उत्तर था आगे क्या – कॉलेज जाऊंगा। फिर प्रश्न किया– ठीक है कॉलेज तो जाओगे लेकिन उसके बाद क्या करोगे? उसका उत्तर था – यह सवाल तो बना ही रहता है पर इस पर विचार अभी से क्यों किया जाये आगे देखा जाएगा। दो–चार वर्षों बाद उसी प्रश्नकर्ता ने उसी विद्यार्थी से दुबारा पूछा– 'क्या कोई विचार सोचा?'' नहीं साहब कोई विचार नहीं किया। क्या विचार करूं कुछ सूझता ही नहीं, परन्तु अभी कुछ समय बाकी है, तब सोचेंगे। ये वे ही शब्द थे जो पहले कहे गये थे लेकिन पहले की आवाज में बेफिक्री थी अब थोड़ी चिन्ता की झलक दिखाई दी। कुछ वर्षों बाद उसी विधार्थी से जो अब गृहस्थ बन गया था, प्रश्नकर्ता ने पूछा– कुछ विचार किया? गृहस्थी निरुत्तर हो गया; उसके चेहरे पर उदासी छा गई थी। इस घटनाक्रम से हम सीख सकते हैं कि लक्ष्य निर्धारण समय पर कर लिया जाना चाहिये तथा उसी के अनुरूप हमें प्रयत्न करना चाहिये। हमारे सारे क्रियाकलाप लक्ष्य की ओर ले जाने वाले होने चाहिये। अतः हमें यह नहीं करना कि पढ़ाई करने के पश्चात् हम अपना जीवन लक्ष्य तय कर लेंगे। समय निकल जाने पर केवल पश्चाताप ही कर सकते हैं।

●

किस जगह से गिर के बन्धु कहाँ रुक सकेंगे हम
बिछुड़े हुओं का संगठन, क्या आज कर सकेंगे हम?
है करना वो न कर सके, तो जिन्दगी का क्या करें।
आओ जरा से बैठकर चेतना नई भरें, सोचना शुरू करें।

– पूज्य तनसिंह जी

राजा-महाराजा से लेकर आम राजपूत स्वतंत्रता सेनानी था

– युधिष्ठिर

एफ ढोल अक्सर पीटा जाता है कि राजपूत स्वतंत्रता सेनानी नहीं थे। लोगों ने भी मान लिया क्योंकि उन्हें एक भी क्षत्रिय चरित्र ऐसा दिखा नहीं। लोगों को ऐसा मनवाया गया, लोगों को ऐसा दिखाया गया। जो मनवाना था और जो दिखाना था उसी का प्रचार किया गया।

राजपूत शासकों ने अपने राज्य में अंग्रेज विरोधी गतिविधियों को होने दिया। अंग्रेज अधिकारियों के कहने व लिखने पर भी अपने अंग्रेज विरोधी जागीरदारों पर किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं की। मारवाड़ के शासक मानसिंह ने मारवाड़ को क्रान्तिकारियों का केन्द्र बना दिया था। उन्होंने अंग्रेजों के मैत्री प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। इतना ही नहीं अंग्रेज विरोधी जसवन्तराय होलकर ने सिन्ध के अमीरों एवं नागपुर के अप्पा साहब भौंसले को शरण व सहायता दी। भिन्न-भिन्न राज दरबारों के सन्देशवाहक फकीरों के वेश में जोधपुर पहुँचते थे और एकान्त में मानसिंह से वार्ता करके उसके संदेश अन्य ब्रिटिश विरोधी तत्त्वों के पास पहुँचाते थे। मानसिंह अंग्रेज विरोधी महाराजा रणजीत सिंह के सम्पर्क में थे। वे विलियम बैंटिक द्वारा अजमेर में आयोजित दरबार में सम्मिलित नहीं हुए। उन्होंने अंग्रेज डॉ. मोहले के हत्यारों को अपने राज्य में शरण दी। विदेशी सहायता से अंग्रेजी सत्ता को उखाड़ने के भी प्रयास किये। 1843 ई. में मानसिंह सन्यासी बन गए अन्यथा 1857 ई. की क्रान्ति का परिणाम दूसरा होता। अंग्रेजों को जीवन भर उन्होंने कर (खराज) नहीं दिया। उनसे कर वसूलने के लिए अजमेर स्थित तत्कालीन पॉलिटिकल एजेन्ट सदरलैण्ड ने जोधपुर के सरदारों को बुलाकर कहा– ''मानसिंह खिराज के रुपये नहीं देता तथा राज्य में सारी अव्यवस्था फैला रहा है।'' उसने सरदारों से पूछा – ''आप हमारा समर्थन करोगे या महाराजा के पक्ष में रहोगे।'' उस समय साथीण ठाकुर शक्तिसिंह ने कहा–''जो असली सरदार हैं वे महाराजा की ओर ही रहेंगे।'' स्थिति देखकर अंग्रेजों ने यहाँ हमला करने की अपनी योजना स्थगित कर दी। यहाँ के सरदारों से सहयोग की उम्मीद नहीं रखी।

जून, 1857 ई. में नीमच में क्रान्तिकारियों को ब्रिटिश सेना के आने की सूचना मिली तब वे लूटमार मचाते शाहपुरा पहुँचे। शाहपुरा राजाधिराज ने उन्हें दो दिन तक अपने यहाँ ठहराया और उनके लिए रसद की व्यवस्था की। जब शावर्स क्रान्तिकारियों का पीछा करता शाहपुरा पहुँचा तब राजाधिराज लक्ष्मणसिंह ने शावर्स का स्वागत नहीं किया। अपने किले का दरवाजा भी नहीं खोला।

महाराणा स्वरूप सिंह ने ब्रिटिश विरोधी सामन्तों पर किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं की। मेजर ईडन ने महाराणा स्वरूपसिंह को सलूम्बर रावत केसरीसिंह व क्रान्तिकारियों के विरुद्ध कार्यवाही करने को कहा तब महाराणा ने उस बारे में अपनी असमर्थता जाहिर कर दी। राष्ट्रीय स्तर पर मान्य क्रान्तिचिन्ह कमल का फूल व चपातियाँ मेवाड़ पहुँची जिसे रावड़दा के ठाकुर गोपालसिंह ने स्वीकारा। इस बारे में भी अंग्रेजों की शिकायत पर महाराणा ने किसी प्रकार की कार्यवाही नहीं की।

कोटा के क्रान्तिकारियों ने मेजर बर्टन व उसके पुत्रों की हत्या कर दी। कुछ ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा उस हत्या के लिए महाराव को दोषी ठहराया गया। उनके अनुसार स्वयं कोटा महाराव ने मेजर बर्टन की हत्या करने की योजना बनायी थी और इसी योजना के तहत महाराव ने मेजर बर्टन को नीमच से बुलाया था। पर ब्रिटिश सरकार कोई प्रमाण नहीं जुटा पाई। महाराव पर केवल 15 लाख रुपया जुर्माना किया गया।

मेवाड़ महाराणा फतहसिंह लार्ड कर्जन के बुलावे पर

सम्राट एडवर्ड के राज्यारोहण के उपलक्ष में 1903 ई. में आयोजित दिल्ली दरबार में दिल्ली पहुँचकर भी सम्मिलित नहीं हुए। दिल्ली में उनकी कुर्सी खाली ही पड़ी रखी। उस खाली कुर्सी की गाथा सारे राजस्थान में फैल गई। लार्ड कर्जन को उनको कुछ भी कहने की हिम्मत नहीं हुई। महाराणा फतहसिंह ने यह घटना 1911 ई. में भी दोहराई। दिल्ली में होकर भी शाही जुलूस में सम्मिलित नहीं हुए और न ही दरबार में उपस्थित हुए। संसार ने आश्चर्यचकित हो मेवाड़ की इस गौरवपूर्ण परम्परा को देखा।

सोढाण-प्रदेश के प्रसिद्ध ठिकाने पार कर के 15 अप्रेल, 1859 ई. के स्वतन्त्रता संग्राम में कल्लजी- मासींग जी लड़ते-लड़ते वीरगति को प्राप्त हुए।

ईडर के राजा करणसिंह के देहान्त के बाद उनकी पाँचों राणियाँ सती होना चाहती थी। राणियों को सती न होने देने के लिये अंग्रेजों ने अपनी फौज तैनात कर डाली। उस समय मुडेटी के ठाकुर स्व. जालमसिंह चौहान के सुपुत्र सूरजमल जी को इस घटना का पता चला। वे आधी रात को ही पहुँच गए। अंग्रेजों से लड़कर पाँचों राणियों को सती होने दिया। प्रभात होने तक अंग्रेजों से लोहा लेते रहे।

उत्तरप्रदेश के बिजनौर जिले में शेखावतों के अनेक गाँव हैं। उन्हीं में से चान्दपुर तहसील के नूरपुर थाने के अन्तर्गत आता है गुनियाखेड़ी गाँव। नूरपुर थाने से पूर्व में 8 कि.मी. दूर स्थित है यह गाँव। 19 वर्षीय प्रवीणसिंह गौना (मुकलावा) कर अपनी पत्नी को लेकर आ रहा था। 16 अगस्त, 1942 का दिन था। मार्ग में ही पता चला कि 'भारत छोड़ो' आंदोलन के अन्तर्गत आज राजकीय भवनों पर तिरंगा फहराने का कार्यक्रम देशभर में रखा गया है। साथियों के साथ अपनी पत्नी को मुनियाखेड़ी के लिये रवाना कर स्वयं स्वतन्त्रता आंदोलन में सम्मीलित होने के लिए नूरपुर पहुँचा। नूरपुर में थाने का भवन ही राजकीय भवन था अतः जुलूस के रूप में थाने की ओर एकत्रित लोग बढ़ चले। थाना अध्यक्ष ने आगे न बढ़ने की चेतावनी दी। फिर भी देशभक्ति के नारे लगाते लोग आगे बढ़ते रखे। थाना अध्यक्ष ने गोली चलाने की धमकी दी। पर जोशीले नवयुवक बढ़ते रहे। अन्त में गोलियाँ चलाई गई। भीड़ तितर-बितर हो गई कुछ लोग घायल हो गए। प्रवीणसिंह डटे रहे। प्रवीणसिंह के गोली लगी परन्तु उसने स्थान नहीं छोड़ा। दूसरी गोली के साथ ही उसने देश पर अपने प्राण न्योछावर कर दिए।

गोलियों की बौछार से मची अफरा-तफरी और उसी समय होती तेज बरसात के समय वीर की देह थाने के पास के एक खड्डे में गिर गई। किसी को कुछ पता नहीं चला। सवेरे परिजन ढूंढने आए तब पता चला। उसका एक साथी भी बेहोश अवस्था में उसी खड्डे में पाया गया। जिसे अस्पताल पहुँचाया गया जहाँ उसका देहान्त हो गया। प्रवीणसिंह के दो माई चन्दू प्रकाशसिंह व राजपालसिंह थे जो अब अपना जीवनकाल समाप्त कर चुके थे।

इन राष्ट्र भक्तों की याद में प्रतिवर्ष 16 अगस्त को नूरपुर में मेला लगता है। जिले का प्रशासन उस दिन नूरपुर में रहता है। स्वतंत्रता सेनानी भी आमंत्रित किए जाते हैं। उस दिन सबकी छुट्टी रहती है। गाँव के उच्चतर माध्यमिक विद्यालय को शहीद स्मारक विद्यालय नाम दिया गया है। थाने के सामने वीर प्रवीणसिंह की मूर्ति लगाई गई है। नूरपुर के एक तिराहे का नाम प्रवीणसिंह के नाम पर रखा गया है। अतिक्रमण हटाकर इस तिराहे को अब विकसित किया जा रहा है।

10 मई, 1857 ईस्वी को जो गौरी सत्ता के विरुद्ध क्रांति जगी। उसमें धौलाना (मेरठ जिला) में 14 कृषकों को गौरी सत्ता से विद्रोह करने वालों का नेतृत्व करने के अपराध में एक पीपल के पेड़ पर फांसी दी गयी। यह मेरठ के कलेक्टर के आदेश से हुआ। उन 14 कृषक क्रांतिकारियों में 13 राजपूत और एक बनिया था। बनिये का नाम था झनकूमल सिंहल। राजपूतों के नाम हैं वजीरसिंह चौहाण, साहबसिंह गहलोत, सुमेरसिंह, किहढसिंह, चन्दनसिंह,

मक्खनसिंह, जियासिंह, दौलतसिंह, जीवराजसिंह, दुर्गासिंह, मुसाहबसिंह, दलेलसिंह और महाराजसिंह। स्वतंत्रता के पश्चात उस घटना की स्मृति में उस स्थान पर एक स्मारक बनाया गया है जो स्वतन्त्रता प्रेमियों की श्रद्धा का केन्द्र है।

संवत् 1914 में अंग्रेज आउवा पर चढ़कर आये। आउवा के स्वामी ने विपत्तियाँ झेलकर भी विकट लड़ाई लड़ी। फिरंगियों ने आउवा को घेर लिया। हार जाने से फिरंगी भाग छूटे। फिरंगी रेजीडेन्ट मिस्टर मेसन् को मार डाला। अंग्रेजों की फौज को काट डाला, वे अपने घायलों को डौलियों में लादकर भाग निकले।

देश भक्त योद्धाओं के शरीर भालों से छिद गये। देह घावों से भर गई, कलेजा कट गया, फेफड़े टुकड़े-टुकड़े हो गये। रक्त से सनी अंतड़ियाँ पाँवों तक लटक गई। तेज घोड़ों की लगाम खींची जा रही थी। तलवारों की झड़ी लगी हुई थी। अंग्रेजों की पत्नियाँ कहती थी ''तुम खुशालसिंह से लड़ने मत जाओ, भला इसी में है कि उससे मित्रता कर लो।''

मेघों की भाँति तोपें गरज रही हैं। युद्ध के गर्जनों से वायुमण्डल कंपित हो रहा है। यमराज के दूत कबड्डी खेल रहे हैं। सूर्योदय के साथ ही भालों की अणियाँ किरणों में चमक उठी। गोरों ने राजस्थानी सिपाहियों की वीरता अपनी आँखों से देख ली। खुशालसिंह ने देशभक्त सिपाहियों का साथ दिया। उसने सेना संगठित कर फिरंगियों से घमासान युद्ध किया। आउवा भारत में प्रसिद्ध हो गया।

अंग्रेज रेजिडेन्ट आउवा पर चढ़ आया था। खुशालसिंह की सेना गोरों पर टूट पड़ी। खुशालसिंह की मूँछे भौंहों से मिल रही हैं। आउवा का यश लन्दन तक फैल गया। आउवा की सेना के सामने अंग्रेजों की विशाल सेना थर-थर काँपने लगी। जिस किसी ने आउवा के ठाकुर खुशालसिंह से युद्ध किया वह उसी समय मिट्टी में मिला दिया गया। खुशालसिंह से युद्ध करने वाला जीवित नहीं रहा। कोठारिया के रावत जोधसिंह ने भी खुशालसिंह आउवा को अपने यहाँ रखकर मेवाड़ की राजपूत परम्परा को निभाया।

खटंगा-पातर (ओरमांझी), राँची के शासक उपराँवसिंह सूर्यवंशी क्षत्रिय चुटूपालू घाटी के घाटवाल राजा थे। इनके भण्डारी बाद में दीवान शेख भीखारी थे। 8 जनवरी, 1858 ई. को राजा उमरांवसिंह व शेख भिखारी को चुटूपाली घाटी के रामगढ़-रांची सड़क पर स्थित बरगद के पेड़ पर उनकी रियाया की क्रुद्ध भीड़ के समक्ष भारी सैनिक पहरे में फांसी पर लटका दिया गया। पहले रांची मोरहावादी स्थित टैगोर हिल के समक्ष पेड़ पर फांसी दी गई थी और बाद में लाशों को चुटूपालू बरगद पेड़ पर लटकाकर मारने का नाटक किया गया। उमरांवसिंह के वंशधर स्व. ठाकुर धनपालसिंह के सुपुत्र भूषणसिंह टूटे-फूटे घर में गरीबी में जीवन यापन कर रहे हैं। जमीन्दारी अंग्रेजों ने उसी समय छीन ली थी। खटंगा में मात्र इनके पास एक एकड़ भूमि बची है। इस ग्राम में इनके अलावा ग्वाला, कुम्हार, मुंडा, करमाली, कुर्मी, घासी, उराँव रहते हैं। रांची से खटंगा 25 कि. मी. दूर है। 100 परिवार रहते हैं, आबादी लगभग एक हजार है।

अंग्रेजों ने आउवा पर दूसरा हमला किया था। जार्ज लॉरेंस ब्यावर से विशाल सेना लेकर आउवा पर आक्रमण के लिए चला। सेनाएं पुन: आउवा में आमने-सामने हुई। ठाकुर खुशालसिंह किले से बाहर आए और अंग्रेज सेना की दुर्गति कर दी। लॉरेंस वापस भागने में सफल हो गया किन्तु मॉक मेसन को क्रांतिकारियों ने ढेर कर दिया। उसका सिर धड़ से अलग कर आउवा में घुमाया गया और फिर किले के दरवाजे पर उल्टा लटका दिया। उस अद्भुत वीरता का बखान डेढ़ सौ वर्ष बीत जाने के बाद आज भी आउवा क्षेत्र के लोकगीतों में किया जाता है।

क्रान्तिकारी धीरसिंह शेखावत अंग्रेजों से लड़ते हुए मारे गये तो उनका सिर अंग्रेज फोरेस्टर ने सार्वजनिक स्थान पर लटकवा दिया जिसको एक मीणा युवक रात्रि में साहस के साथ उतार लाया।

जयपुर के कपट द्वारा से प्राप्त इसतिहाद छत्र रजब कार्तिक सुदी 6 संवत् 1860 से ज्ञात होता है कि राजस्थान

के राजा अंग्रेज़ों के विरुद्ध में थे। बिसाऊ के ठाकुर श्यामसिंह ने वि. 1868 में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ने वाले रणजीतसिंह (पंजाब) की सहायता अपनी सेना भेजकर की थी। उस समय ज्ञानसिंह मण्डावा ने भी अपनी सेना रणजीत सिंह की सहायता के लिये भेजी थी। बहल पर अपना अधिकार बनाये रखने के लिए कानसिंह ने अंग्रेजों से संघर्ष किया था। श्यामसिंह बिसाऊ ने बहल के आसपास का क्षेत्र व गाँव अंग्रेजों से छीन लिये थे। कानसिंह व सम्पतसिंह के नेतृत्व में तीन हजार भोजराजजी के शेखावत अंग्रेजों से लड़ने पहुँचे थे। मध्यप्रदेश के नरवरगढ़ के कच्छवाहा राजा मानसिंह भी क्रान्तिकारी थे।

बठोठ पाटोदा के डूंगजी जवाहरजी दो बड़े क्रांतिकारी हुए जिन्होंने अंग्रेजों के खजानों एवं छावनियों को लूटा और धन गरीबों में बांटा। उन्होंने आगरा के किले में बन्दी अनेक क्रांतिकारियों को मुक्त करवाया। उनके साथ लोटिया जाट और करणियाँ मीणा भी थे। इन क्रान्तिकारियों ने अंग्रेजों को कभी चैन से नहीं बैठने दिया। अंग्रेजों के विरुद्ध लोगों के हौसले बुलन्द रखने में मदद की।

स्वतंत्रता की लड़ाई में राजपूतों की अहम भूमिका रही, किन्तु एक साजिश के तहत उनके नामों का उल्लेख इतिहास में नहीं मिलता। अंग्रेजों द्वारा किये गये अत्याचारी कृत्यों को भी देशी राजाओं के नाम डालकर पूरी क्षत्रिय कौम को बदनाम करने और आम भारतीय में उनके प्रति घृणा का प्रसार करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। ●

पृष्ठ 18 का शेष

आत्म सुधार व लोक व्यवहार

अन्दर सहनशीलता का भाव बढ़ेगा। सबको समझने का मतलब है, सबको माफ कर देना। हमारी की गई निंदा से परिवार के सदस्यों, मित्रों और हमारे अपनों का मनोबल कम होता है। एक महान मनोवैज्ञानिक हैंस सेल्वे ने कहा है कि- 'जितने हम सराहना के भूखे होते हैं, उतने ही हम निन्द्रा से डरते हैं।

मनोविज्ञान कहता है कि कोई भी मनुष्य नहीं चाहता कि उस पर कोई हुक्म चलाए। हमें कोई कार्य यदि किसी व्यक्ति या समूह से करवाना हो तो सीधा आदेश देने की बजाय हम प्रश्न पूछ सकते हैं, जैसे-हम इस काम को क्या पूरा कर पाएंगे? इस काम को बेहतर तरीके से कैसे किया जा सकता है?

किसी व्यक्ति के आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाना बहुत बड़ा अपराध है। बहुत बार हम अपने तरीके से सोचते हैं या अपनी मनमानी करते हैं, दूसरों की भावनाओं की परवाह किए बिना अपना मत रख देते हैं, उनकी गलतियाँ गिनाते हैं। इस तरह से हम उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचा रहे होते हैं। हम शान्त होकर उसे प्रोत्साहित कर बता सकते हैं कि गलतियाँ सुधारना आसान है।

उपरोक्त सभी सुझाव निरन्तर श्रेष्ठ संघ साहित्य व अच्छे विचारकों व साहित्यकारों के अध्ययन से प्राप्त हुए वही मैंने सबसे बांटने का प्रयास किया है। निःसन्देह संघ साहित्य से व अच्छे साहित्य से हम सदैव आत्म-सुधार की ओर अग्रसर रहेंगे। ●

चूहों की दुकान पर जाकर देखें तो लगेगा उनके पास अहंकार से बढकर और कोई विक्रय का सामान नहीं है। उस अहंकार को भी वे किसी कीमत पर बेचना नहीं चाहते, फिर पता नहीं वे दुकानें क्यों सजाकर बैठे हैं।

- पूज्य तनसिंह जी

क्षत्रिय समाज में विवाह संस्कार तब और अब
सम्बन्ध से अनुबन्ध की यात्रा

– राजेन्द्र सिंह राणीगाँव

हमारी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार महाराज ''मनु'' एवं रानी सतरुपा की संतति 'मानव' (मनुष्य) कहलाते हैं। मानव एक सामाजिक प्राणी है। समाज की अविभाज्य ईकाई ''परिवार'' है। परिवार का निर्माण जिस माध्यम से होता है वह ''विवाह'' नामक संस्था है।

मानव के जन्म से लेकर शरीर के अवसान तक 16 संस्कार माने जाते हैं। जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्कार ''विवाह'' को माना जाता है। इस संस्कार को धार्मिक एवं सामाजिक मान्यताओं में अत्यन्त ''पवित्र'' एवं दो आत्माओं का अटूट बन्धन माना जाता है। जन्म-जन्मान्तर का आत्मानुबन्ध इस संस्कार की आधारशिला है।

हमारे यहाँ भगवान ''शिव'' एवं माता ''पार्वती'' के परिवार को आदर्शतम परिवार माना जाता है। वहाँ एक दूसरे से पूर्णतया भिन्न प्रकृति एवं शत्रुभाव रखने वाले प्राणी भी सुख-पूर्वक रहते हैं। जैसे भगवान शिव की सवारी ''नन्दी'' तो माँ पार्वती का वाहन ''सिंह'' है, भोलेनाथ के आभूषण ''सर्प'' है तो उनके पुत्र श्री गणेश का वाहन ''मूषक'' है, दूसरे पुत्र स्वामी कार्तिकेय का वाहन ''मयूर'' है। ये सभी प्राणी एक दूसरे के प्राणघातक शत्रु हैं परन्तु शिव-पार्वती दम्पति के प्रभाव से वे सुख-पूर्वक मैत्री भाव से एक साथ रहते हैं। परिवार में इस प्रकार सामंजस्य का भाव बना रहे इसलिए हमारे विवाह संस्कार की प्रेरणा भी भगवान शिव-पार्वती का युगल ही है।

विवाह की संस्था को मानव इतिहास के विभिन्न काल खण्डों में अनेक रूपों में परिवर्तन का साक्षी बनना पड़ा है।

क्षत्रियों में विवाह संस्कार की बात करें तो हमें ज्ञात होता है कि समाज के शेष तीनों अंगों की ''रक्षा'' का दायित्व एवं प्रजापालक का कर्तव्य निर्वहन करने वाला होने के कारण हमारी संस्कार प्रणाली का प्रभाव अन्य अंगों पर भी पड़ता था।

हमारे विवाह संस्कार सामान्यतया लोकाचार एवं कर्मकाण्ड के अनुमार ही सम्पन्न होते थे। कुछ विशेष परिस्थितियों यथा अचानक युद्ध की स्थिति या अन्य गम्भीर स्थिति में ''वर'' व्यक्तिगत रूप से विवाह के समय अपनी अनुपस्थिति के कारण अपना शस्त्र (तलवार) ''वधु'' पक्ष के यहाँ भेज देता था। ''वधु'' उस ''तलवार'' के साथ धार्मिक रीति से अग्नि की साक्षी में विवाह के कर्म काण्ड पूरे करती थी। ऐसे विवाह को तत्कालीन समय में ''खाण्डा'' विवाह कहा जाता था। ''खाण्डा'' विवाह को पूर्ण धार्मिक एवं सामाजिक स्वीकृति प्राप्त थी। इस प्रकार के विवाहों की सहज स्वीकृति के पीछे हमारी मान्यता यह थी कि विवाह एक ईश्वरीय विधान होता है तथा यह आत्मानुबन्ध है शरीर की उपस्थिति गौण मानी जाती थी।

खाण्डा विवाह का प्रसिद्ध उदाहरण वर्तमान इतिहास में जोधपुर राज्य के महाराजा जसवन्त सिंह जी (द्वितीय) एवं जामनगर की राजकुमारी ''राज कंवरी जी जाड़ेची'' का वर्ष 1854 में सम्पन्न ऐसा विवाह है। इस उदाहरण की प्रस्तुति का उद्देश्य मात्र इस तथ्य को रेखांकित करना है कि हमारे यहाँ विवाह संस्कार की मूल भावना शरीर नहीं आत्मा के मिलन को माना जाता रहा है। इसी तथ्य को और अधिक पुष्ट करने हेतु तत्कालीन जोधपुर राज्य के शासक ''राव मालदेव जी'' एवं ''राणी उमादे भटियानी'' के विवाह का प्रकरण है। इन दोनों के विवाह के पश्चात वे कभी जीवन पर्यन्त व्यक्तिगत रूप से मिले नहीं परन्तु राव मालदेव जी के

निधन के उपरांत ''भटियाणी जी'' 'सती' हुई थी। यह घटना सिद्ध करती है कि विवाह शारीरिक सम्बन्धों से परे शुद्ध सात्विक बंधन है। पति-पत्नी में मत भिन्नता के अनेक कारण पूर्व में भी होते थे आज भी होते हैं परन्तु पहले विवाह-विच्छेद को सामाजिक एवं धार्मिक स्वीकृति नहीं थी। हमारे धर्म शास्त्रों एवं व्याकरण में विवाह-विच्छेद (तलाक) का कोई उल्लेख नहीं मिलता है।

आज से लगभग 50 वर्ष पूर्व तक क्षत्रिय समाज में विवाह की संस्था का मूलाधार उपरोक्त धार्मिक एवं सामाजिक मान्यताएँ थी। यद्यपि देश की अंग्रेजी दासता से मुक्ति के पश्चात् हमारे देशव्यापी संविधान में विवाह विच्छेद को मान्यता प्रदान की थी। हिन्दु विवाह अधिनियम 1955 के प्रावधान हमारे समाज पर भी समान रूप से लागू थे। इन प्रावधानों के उपरांत भी विवाह-विच्छेद एवं स्त्रियों के पुनर्विवाह के मामले दुर्लभ ही होते थे। विधवा विवाह भी हमारे समाज में प्रचलित नहीं रहा।

अब यदि हम वर्तमान अर्द्धशताब्दी (50 वर्ष) की बात करें तो समय तेजी से बदला है, समय, काल एवं परिस्थितियों के अनुसार वैचारिक परिवर्तन से सामाजिक मान्यताओं में तीव्र गति से परिवर्तन हुआ है।

संयुक्त परिवारों के ''विखण्डन'', शहरी क्षेत्रों की ओर पलायन एवं ''अर्थ'' के बढ़ते प्रभाव से अत्यन्त गम्भीर एवं नवीन परिस्थितियाँ जटिल रूप में उत्पन्न हो गई। विधवा क्षत्राणियों, विशेष रूप से कम आयु वाली, के समक्ष अत्यत कठिन एवं व्यावहारिक कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। अतः समाज आज की परिस्थिति के अनुकूल ''विधवा-विवाह'' को सहन करने लगा है। विधवा-विवाह के रूप में ही सही परन्तु स्त्रियों को पुनर्विवाह के वैधानिक एवं सामाजिक अधिकार की प्राप्ति से एक अवांच्छित परिदृश्य हमारे समाज के समक्ष उपस्थित हो गया है।

आज हमारे यहाँ विवाह-विच्छेद के लम्बित प्रकरणों की संख्या में अचानक से तेजी आई गई है।

हम यदि राजस्थान के दो बड़े शहरों जयपुर एवं जोधपुर के क्षत्रिय बाहुल्य क्षेत्रों पर दृष्टिपात करें तो एक चिंताजनक चित्र हमारे समक्ष उपस्थित होता है। ऐसे अनेक उदाहरण मिल जायेंगे जहाँ नव विवाहिता अपने पति से अलग होकर माता-पिता के पास रह रही है तथा विवाह विच्छेद हेतु कटिबद्ध है। ग्रामीण क्षेत्रों एवं अन्य शहरों में भी ऐसे प्रकरण बहुतायत में मिलते हैं। यदि हम कहें कि यह ''व्याधि'' अब ''संक्रामक महामारी'' का रूप ग्रहण कर चुकी है तो भी कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। अधिक चिंता का विषय यह है कि इतनी गम्भीर स्थिति को भी हम सामाजिक रूप से आँखें बन्द कर अनदेखा कर रहे हैं। हमारे किसी भी सामाजिक आयोजन में इस विषय में कोई चर्चा अपवाद स्वरूप ही होती है। हम अभी भी ''महामारी'' को जान-बूझकर अस्वीकार कर रहे हैं।

ऐसे सभी प्रकरणों में सामान्य रूप से निम्न बातें समान मिलेंगी-

- विवाह का आयोजन शहरी क्षेत्र में धूमधाम से हुआ था।
- विवाह के प्रथम 6/12 माह में यह स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि विवाहिता एवं वर के परिवारजन अपने-अपने पुत्री-पुत्र के निर्णय के साथ एकाकार रहते हैं। प्रभावी भूमिका माताओं एवं बड़ी बहनों की होती है।
- दोनों पक्षों के दादोसा-दादीसा, बाबोसा-भाभूसा, काकोसा-काकीसा, नानोसा-नानीसा, मामोसा-मामीसा, मांसोसा-मांसीसा, भुवासा-फूंफोसा कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकते हैं। वे मात्र मूक दर्शक की भूमिका में ही घटना क्रम में साक्षी हो सकते हैं।
- विवाह के समय बने 'मध्यस्थ' को दोंनों पक्ष कोई ऐसा अधिकार नहीं देना चाहते जिससे उनके पक्ष का लचीलापन दृष्टिगोचर होता हो, फलस्वरूप दोनो पक्षों के मध्य कोई प्रभावी सम्पर्क सूत्र नहीं रहता है। अतः विधिक न्यायालयों में प्रकरणों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है।

(शेष पृष्ठ 32 पर)

गतांक से आगे

आओ! कुछ चिन्तन करें-4

– भंवरसिंह मांडासी

बच्चों को संस्कारहीनता से बचाएँ :–

अगर हमें अपनी संस्कृति और अपनी मान-मर्यादा का पाठ बच्चों को सिखाना है तो टी.वी. संस्कृति से जरूर बचें। टी.वी. आज घर-घर की आवश्यकता और शोभा हो गई है फिर विवाह शादी में तो टी.वी. की मांग विशेष रूप से हो रही है, लेकिन टी.वी. पर जो कुछ परोसा जा रहा है, वह सब कुछ पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव वाला मनोरंजन है जो किशोरवय के बच्चों पर दुष्प्रभाव डालता है। ऐसी स्थिति में बच्चों को टी.वी. से जितना दूर रखा जाए, ज्यादा बेहतर है। लोगों ने टी.वी. को स्टेट्स सिम्बल मान लिया है जिस घर में टी.वी. नहीं, वह स्तरीय परिवार नहीं माना जाता है। यह सोच हमारे बच्चों को बिगाड़ रहा है और हम टी.वी. संस्कृति के भक्त बनकर सब प्रकार की मान-मर्यादाओं को खत्म करने में लगे हैं। जो नहीं चाहते उसे जबरन हमारे मन-मस्तिष्क में हंसी-खुशी के साथ उतारा जा रहा है उसके परिणाम बड़े घातक सिद्ध हो रहे हैं।

लड़के-लड़कियों को शिक्षित करें :–

युग की रफ्तार के साथ आगे बढ़ना है तो युग की जरूरत और माँग को ध्यान में रखना ही बुद्धिमानी और दूरदर्शिता है। आज का युग शिक्षा का है। परिवार को आर्थिक दृष्टि से मजबूत करने के लिए लड़के-लड़कियों को शिक्षित करना अपनी भावी पीढ़ी को सुधारना है। यह निश्चित है कि अगर हमने अपने बच्चों को जैसे-जैसे शिक्षित कर दिया है तो स्वयं अपनी भावी पीढ़ी को सुधारते रहेंगे और परिवार का सामाजिक स्तर भी स्वत: सुधर जाएगा। हमारे समाज में कई तरह की कुप्रथाएँ एवं कुरीतियाँ हैं उनके कारण समाज पिछड़ रहा है लेकिन उनका निराकरण न घोषणाओं से हो सकता है न प्रतिज्ञाओं से। इसके लिए समाज के युवा वर्ग की मानसिकता को बदलने की जरूरत है और यह बदलाव केवल शिक्षा के माध्यम से ही सम्भव हो सकता है। इस तथ्य को स्वीकार करना पड़ेगा कि समाज में गरीबी एवं पिछड़ापन है। आज बच्चों की शिक्षा भी महंगी एवं खर्चीली है फिर उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा में जैसी प्रतिस्पर्धा है, उसमें सफलता प्राप्त करना भी आसान नहीं लेकिन फिर भी शिक्षा में हमें आगे बढ़ना है। हमारी लड़कियाँ आज भी उच्च शिक्षा से वंचित हैं उनको सुसंस्कारित एवं शिक्षित करने से दो परिवारों का सुधार होगा। शिक्षा आज के जीवन का आधार है। शिक्षा से आर्थिक पिछड़ापन दूर हो सकता है।

स्नेह मिलन/विचार मंच/संकीर्तन से जुड़ें :–

समाज के लोगों का आपसी संवाद नयी चेतना, उत्साह और क्रियाशीलता पैदा करता है। समाज को जागृत करने के लिए कुछ प्रियजनों का होना नितान्त आवश्यक है। इससे हमारा बिखराव बढ़ेगा नहीं, जुड़ेगा। हम एक दूसरे के निकट आयेंगे, नए परिचय से सम्पर्क बढ़ेगा और बातचीत से कई लाभकारी निर्णय भी लिए जा सकते हैं। इस दृष्टि से होली एवं दीपावली पर स्नेह मिलन का सार्वजनिक कार्यक्रम आयोजित होना चाहिए। त्योहार पर कुछ लोग बाहर चले जाते हैं तो कुछ निजी कार्यक्रम में भी व्यस्त हो सकते हैं अत: इन त्योहारों का एक सप्ताह तक सुविधापूर्वक आयोजन किया जा सकता है। सामाजिक समस्याओं, राजनीतिक स्थितियों, सम-सामयिक घटना-प्रसंगों और संगठन की आवश्यकता की दृष्टि से भी कई बार विचार-विमर्श जरूरी होता है, इसके लिये विचार मंच स्थापित होना चाहिए। इसके माध्यम से रचनात्मक गतिविधियाँ भी हो सकती हैं। हमारे महापुरुषों की जयन्तियाँ अत्यावश्यक हैं। इनसे भावी पीढ़ी को प्रेरणा मिलेगी। दशहरा बड़ा पर्व है और शेखाजी की जयन्ती का शुभ दिन भी है इसलिए इसे हर्षोल्लास और उमंग से सामूहिक रूप में मनाना चाहिए। संगठन की दृष्टि से ऐसी जयन्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। महिलाओं के

पारस्परिक परिचय, मिलन और सद्भाव की दृष्टि से संकीर्तन का आयोजन होना चाहिए।

प्रवासी राजपूत : सहयोग की अपेक्षा :-

जमीन, ढ़ाल और तलवार- यही राजपूत चरित्र की पहचान मानी गई है, यही उसकी जीविका और जीवनशैली है। लेकिन युग और उसके मापदण्ड बदलते हैं तो जीवन-शैली भी बदल जाती है और उसका बदलना उचित भी है। रक्षक बनकर जीना और मरना-यही राजपूत का आदर्श था और आदिकाल से लेकर अब तक का इतिहास इस बात का साक्षी भी रहा है। आज स्थितियाँ भिन्न हैं तो हमारे समाज के व्यक्ति ने भी उनके अनुरूप अपने को बदला है। जीविका जुटाने के लिए वह राजस्थान से देश एवं विदेश में पहुँचा है। व्यवसाय या अन्य तकनीकी हुनर से उसने पैसा कमाया है और वह आज सम्पन्न है, समाज के लिए कुछ कर भी सकता है। ऐसे नव उद्यमी व्यवसायी लोगों से यह अपील है कि वे समाज के लिये थोड़ा खर्च करें। समाज के कमजोर वर्ग की मदद भी हमारा आत्मबल बढ़ाती है। हमें यह महसूस होता है कि हम अपने परिश्रम का सदुपयोग कर रहे हैं।

ऐसे प्रवासी लोगों से अपेक्षा है कि वे मेधावी छात्रों के उच्च अध्ययन के लिये छात्रवृति दे सकते हैं। कमजोर लड़के-लड़कियों की शिक्षा का संपूर्ण खर्च उठा सकते हैं, व्यावसायिक, पाठ्यक्रमों में योग्यता हासिल करने वाले लड़कों की आर्थिक मदद कर सकते हैं, छात्रावास निर्माण में सहयोगी हो सकते हैं, समाज की विधवा एवं निराश्रित महिलाओं को गुजारा-भत्ता दे सकते हैं। समाज-जागृति के लिए प्रेरक साहित्य छपवा सकते हैं। वे उदार बनकर अपने धन का सदुपयोग करें तथा समाज में बाँटकर, समाज की शुभकामनाओं एवं आशीर्वाद लें। धनसंचय महत्त्वपूर्ण नहीं, धन को बांटना उदारता और बड़प्पन है। केवल अपना नहीं समाज का भी भला सोचें। अगर प्रवासी बन्धु अपनी सम्पन्नता से समाज का सहयोग करें तो संपूर्ण समाज का सुधार हो सकता है। बहुजन सुखाय का सुख कोई बिरला ही अनुभव करता है तो फिर प्रवासी समाज बन्धु पीछे क्यों रहें।

पर्दा-प्रथा, फैशन और वजूद को मिटाती पोशाक :-

सदियों से हमारे समाज में पर्दा प्रथा रही है। शिक्षा, शहरी प्रभाव और कामकाजी महिलाओं के कारण पर्दे की उपेक्षा हुई है लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में आज भी पर्दे का चलन कई जगह दिखाई देता है। घूंघट आज भी हमारे समाज में मान-मर्यादा और लज्जा का प्रतीक माना जाता है लेकिन धीरे-धीरे पर्दा और घूंघट दोनों मर्यादा प्रतीक अब समाप्त होते जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में हमें समय के अनुकूल परिवर्तन करने में कोई आपत्ति नहीं है। जहाँ जरूरत हो पर्दे का उपयोग किया जा सकता है लेकिन उसे प्रथा मात्र के रूप में ढ़ोना असंगत प्रतीत हो सकता है। दूसरी तरफ कुछ पढ़े-लिखे परिवारों में फैशन का प्रभाव भी बढ रहा है। कान्वेट और उच्च शिक्षा में पढ़ रही लड़कियाँ अपने परिवेश के अनुकूल फैशन को अपना रही है फिर टी.वी. संस्कृति और सिनेमा भी अपने प्रभाव के आकर्षण में फंसा रहे हैं। गौरतलब है कि राजपूत संस्कृति में मर्यादित पहनावा ही स्वीकार्य रहा है जो हमारे संस्कार एवं शालीनता को प्रकट करता है। अंग प्रदर्शन वाली वेशभूषा हमारे समाज में सदैव त्याज्य रही है। फैशन कोई भी हो, वह तात्कालिक, देखादेखी, नकल और दूसरों का ध्यान खींचने का माध्यम भर है। राजपूती परिधान (लहंगा, लूगड़ी, कुर्ती-कांचली) शालीनता, शिष्टता और मर्यादा का प्रतीक है। हमें अपनी लड़कियों में इस लिबास को अपनाने के संस्कार देने चाहिए। विभिन्न अवसरों पर पोशाक परिवर्तन मान्य हो सकता है लेकिन हमेशा नहीं। विचित्र बात यह है कि आज हम अपनी पोशाक छोड़ रहे हैं और दूसरे समाज उसे अपना रहे हैं।

संस्कार-रक्षा की कठिन चुनौती :-

सदियों के संस्कारों से जिन जीवन-मूल्यों और आदर्शों का निर्माण किया, उनके सामने आज कठिन चुनौती है। हम जब अपने संस्कारों के अनुकूल कार्य करते हैं तो हमें सफलता की जगह नुकसान उठाना पड़ता है और हम अपने संस्कारों से हटकर घालमेल का समर्थन करते हैं तो

लोग हमारे चरित्र की भर्त्सना करने लगते हैं। मजे की बात है कि वे खुद तो जमाने की रफ्तार में अपनी जीवनशैली बना चुके हैं। अगर हमने इसका सोच-समझकर सामना किया तो हम अपने संस्कारों की रक्षा करने में विजय प्राप्त कर लेंगे और यह विजय जीवन मूल्यों की सुदृढ़ता और उनके सुपरिणाम की प्रतीक होगी। हम विचलित न हों, विफलता से निराश न हों, शायद किसी परम शक्ति ने हमें संस्कार रक्षा के लिए इस दुनिया में भेजा हो। अत: सही निर्णय करें और तकलीफ उठानी पड़े तो उठाएँ।

आओ, इन बिन्दुओं से विचार एवं व्यवहार के क्षेत्र में जुड़ें।

प्रेषक : **भंवरसिंह मांडासी**
साभार : **राजपूत निर्देशिका**

तोड़ो भी तो

– भंवरसिंह देवगाँव

तोड़ो भी तो कुछ अमिय कलश, यदि टूट सकें तुम्हरे कर से
फैको भी तो कुछ कुसुम गुच्छ, यदि फेंक सको तुम्हरे घर से
करना ही है तो करो सफल, मानव तन को कर श्रेष्ठ काज
क्यों फेंक रहे प्रस्तर उस पर, पाते मधुफल जिस तरुवर से

क्यों इतने हो निर्लज्ज निपट अति, नग्न नृत्य करवाते हो
अपनी मेधा का दुरुपयोग कर, सकल जगत भरमाते हो
करवाते हो नित द्वन्द्व मनस, अपने लालच हो वशीभूत
दिखना ही है तो दिखो देव, क्यों दिखते हो प्रतिपल खर से
तोडो भी.....

क्यों निष्ठुर इतने हो कठोर, देखे पाषाण अचम्भित हो
क्यों हो इतने श्रीहीन मनुज, स्नेहिल करुणा से वंचित हो
क्यों बोते रहते घृणा बीज, मानव मन की भू के ऊपर
बनना ही है तो बनो वरुण, विहँसे कुछ कमल सरोवर से
तोड़ो भी.....

करते हिंसा का अट्टहास, हा हा हा हा कर दिग्दिगन्त
रचना का लेश नहीं उर में, उद्यत रहते अनवरत अन्त
द्रुत से अति द्रुत अति अति द्रुत हो, करते रहते हो क्लांत शांत
दृष्टा बन शांत करो मन को, धधके जो होय पयोधर से
तोड़ो भी.....

तुम छोड़ चुके कब से विमूढ, पुरुषार्थ चतुष्ट्य की पूजा
है कहीं श्रेष्ठ सुन्दर सुखकर, नर्तन प्रकृति सा सम दूजा
अपने अन्तर का परम छोड़, भागे फिरते तृष्णा तम में
है कहीं श्रेष्ठ योनि इससे, तुम पूछो जगत चराचर से
तोड़ो भी.....

गतांक से आगे

खंडहर बता रहे वैभव की गाथा

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

कोलासर के हथूंडिया राठौड़-हथूंडी (हस्तिकुंडी) के राठौड़ (राष्ट्रकूट) धवलराज की कीर्तिपताका ने मरुभोम राजस्थान एवं गुजरात क्षेत्र के विभिन्न राज्यों की शासन व्यवस्थाओं को प्रभावित किया था। पूर्व पृष्ठों में हमने अध्ययन किया है कि इस प्रतिष्ठित शासक ने हथूंडी में निष्कंटक राज्य संचालित करते हुये अपने जीवनकाल में ही प्रियपुत्र बाला प्रसाद को राज्य संचालन हेतु अपनी समस्त शक्तियाँ प्रदान कर दी थी। धवलराज के अन्य पुत्रों ने अपने सुरक्षित भविष्य के लिये अन्य क्षेत्रों में राज्य स्थापित करने का प्रयास किया जिसमें इस दूरदर्शी शासक का प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष सहयोग रहा। सम्भवत: धवलराज के एक पुत्र ने कोलासर (रतनगढ़) जिला-चूरू को राजधानी बनाकर वि.सं. 1040 के लगभग अपने नये राज्य की नींव रखी। कृषक एवं पशुपालकों की दूर-दूर तक आबादित ढाणियों के मध्य स्थित कोलासर का तालाब पानी का मुख्य स्रोत था। घांघू (चूरू) एवं चरलू-छापर के लगभग मध्य में स्थित यह स्थान गढ (किला, कोट) बनाने के अनुकूल था इसलिये 4 कि.मी. (सवा कोस) पर ऊँचे स्थान को देखकर सम्भवत: तालाब के नाम से कोलासर गढ का निर्माण करवाया गया। भौगोलिक एवं राजनैतिक दृष्टि से इस क्षेत्र में ददरेवा को छोड़कर अन्य राज्य प्रभावहीन थे। कोलासर राज्य की स्थापना में हथूंडी के प्रभावशाली शासक धवलराज के योगदान को नकारा नहीं जा सकता क्योंकि तत्कालीन समय में मरुक्षेत्र पर प्रभाव रखने वाले शक्तिशाली शासक सांभर के चौहान दुर्लभराज को परास्त कर नाडोल के महेन्द्र चौहान की रक्षा की थी तथा मारवाड़ के शासक धरणीवराह से मित्रता कर गुजरात के सोलंकी मूलराज को परास्त किया था इसलिए नए राज्य की स्थापना के समय हथूंडिया राजपरिवार का विरोध करने का साहस किसी भी क्षेत्रीय शासक में नहीं था। दक्षिण भारत के मान्यखेट से आकर गुजरात के शासक रहे, इस परिवार से निकली राष्ट्रकूटों की इस हथूंडिया शाखा के अधिकतर शासक जैन धर्म के अनुयायी थे। दानपत्रों एवं अन्य स्रोतों से ज्ञात होता है कि इन्होंने मन्दिरों एवं तालाबों के जीर्णोद्धार के अतिरिक्त साधु-सन्तों व दीन-दुखियों को भी खुले हाथ से दान दिया तथा अपनी जनता का पालन-पोषण कर मरु-प्रदेश में प्रतिष्ठा प्राप्त कर अपने को सर्वश्रेष्ठ सिद्ध किया।

कुओं-तालाबों एवं लोककथाओं तथा योगी समाज के बहीभाट (ऐतिहासिक तथ्य-प्राप्ति स्थल पर योगी समाज का गाँव हुडेरा जोगियान आबाद है) की बही के आधार पर प्रमाणित होता है कि कोलासर राज्य की स्थापना करने वाला हथूंडी के शासक धवलराज का पुत्र सिंघराज हथूंडिया (सिंघड़ हथूंडिया, राज सिंघा, सिंघा राजा) था। आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न इस शासक ने सामरिक महत्त्व के उच्च स्थान पर गढ निर्माण के अतिरिक्त अपने राज्य के सभी क्षेत्रों में कुओं-तालाबों के निर्माण को प्राथमिकता प्रदान की थी। पंक्तियों के लेखक ने स्वयं भग्नावशेष गढ तथा हुडेरा में तालाब के पास पहाड़ी पत्थरों से निर्मित 'सिंघड़ु (सिंगड़ु) कुआ' का अवलोकन किया है। पश्चिमी तालाब के पास पहाड़ी पत्थरों से बने हुये सिंघड़ु कुआ से प्रमाणित होता है कि इस कुआ का निर्माण हथूंडी के कारीगरों द्वारा किया गया होगा क्योंकि हथूंडी पहाड़ी क्षेत्र में आबाद था तथा यहाँ के मिस्त्री भी इस पत्थर के निर्माण कार्य से अनभिज्ञ थे। पूर्व दिशा के तालाब के पास भी एक पुराना कुआ है जो सम्भवत प्रथम या द्वितीय राजा के समय बनाया गया है। लोकचर्चाओं में सबसे पुराना सिंघड़ु कुआ राजा का बनाया हुआ बताया

जाता है। यह राजा का कुआ कहलाता है जिसमें मिट्टी की छोटी-छोटी गणगोर को भी डाला (पधराया) जाता है। तालाब के किनारे कुओं का निर्माण मीठे पानी की प्रचुरता के लिए होता था। नवस्थापित कोलासर राज्य का निकटवर्ती राजनैतिक क्षेत्र महत्त्वाकांक्षी सिंघराज के अनुकूल था। उस समय चरलू-छापर क्षेत्र पर इन्दराज (घंघरान चौहान का पुत्र) के पुत्र-पौत्रों (अर्जन, सर्जन, मोयल) का शक्तिहीन राज्य था एवं घांघू (चूरू) में अमरपाल के परिवार में आपसी कलह चरम सीमा पर थी तथा रिणी (तारानगर) डाहलियों की शताब्दियों पुरानी सत्ता प्रभावहीन होकर नष्ट होने के कगार पर थी। ददरेवा के जेवर (जीवराज चौहान) व उसके युवा पुत्र गोगदेव की प्रतिष्ठा जनसामान्य को आकर्षित कर रही थी। युवराज गोगा का जन्म विक्रम की 11वीं शताब्दी के तृतीय दशक में होना प्रमाणित होता है। शक्ति सम्पन्न ददरेवा राणा के पुत्र गोगदेव के साथ सिंघराज ने अपनी राजकुमारी केलमदे के विवाह का प्रस्ताव (नारियल) भेजा, जिसे ददरेवा राजपरिवार ने सहर्ष स्वीहार कर लिया। इस वैवाहिक सम्बन्ध ने दोनों राज्यों की शक्ति में वृद्धि की। अनुकूल परिस्थितियों से उत्साहित राजा सिंघराज ने सम्भवत: घांघू क्षेत्र पर अधिकार कर लिया, चूरू का सिंघड़ कुआ इसका प्रमाण है। परिस्थितियाँ एवं ऐतिहासिक तथ्य प्रमाणित करते हैं कि चरलू-छापर में अर्जन के पौत्र, सर्जन के पुत्र मोहिल के शक्तिसम्पन्न होने तक यह राज्य (कोलासर) स्वतंत्र रहा।

कोलासर पर राष्ट्रकूटों की इस शाखा का राज्य विक्रम की 11वीं शताब्दी के लगभग मध्य से 14वीं शताब्दी के प्रथम दशक तक होना प्रमाणित होता है। युद्ध मैदान हुडेरा गाँव से अलग-अलग समय की तीन प्रकार के पत्थरों से बनी देवलियां (स्मारक, पत्थर पर उकेरित चित्र एवं लेख) इस बात का प्रमाण हैं कि सत्ता संघर्ष के लिये तीन बड़े युद्ध हुये थे। एक देवळी पर घुड़सवार हाथ में तलवार लिये है इसके आगे तीन सतियाँ जो हाथ जोड़े खड़ी हैं, का चित्र उकेरित है। जनसामान्य द्वारा लाछा, पानां, श्यामा के नाम से पूजा होती है। देवळी के ऊपर दीवार में इनके स्थान बनाये हुये हैं। यह सबसे पुरानी देवळी प्रतीत होती है। इसके नीचे का लिखित भाग टूटा हुआ है। पहले शासक राजा सिंघराज के समय मोहिल परिवार इनसे युद्ध के लिये सक्षम नहीं था इसलिए सम्भव है कि यह कोलासर के दूसरे शासक की देवळी है। मोहिल या उसके उत्तराधिकारियों तथा कोलासर के राठौड़ शासक के मध्य संघर्ष के बाद सम्भव है कि कोलासर के शासक मोहिलों के सामन्त हो गये और वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर मित्रता कर ली हो क्योंकि मोहिल एवं उसके उत्तराधिकारी हरदत ने राज्य क्षेत्र का विस्तार किया था। वि.सं. 1162 का जीणमाता मन्दिर में स्थिति शिलालेख हरदत की सुदृढ़, आर्थिक एवं राजनीतिक स्थिति को प्रगट करता है। दूसरी देवळी में वीर घुड़सवार के आगे एक सती का चित्र है। यह मूर्तिकला शैली पहली देवळी से भिन्न है जो यह सिद्ध करती है कि मोहिलों के कमजोर शासक के समय कोलासर के शासक (सामंत) ने स्वतंत्र होने का प्रयास किया हो एवं युद्ध मैदान में काम आया, देवळी के नीचे का भाग टूटा हुआ है इसलिये विवरण उपलब्ध नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों देवळियाँ अलग-अलग स्थानों पर थी लेकिन खण्डित होने के उपरान्त आस्तिक-जनों ने जुझार राठौड़ नरहरिदास एवं संत देवळनाथ की समाधि स्थल पर रखवा दिया। सम्भव है ये दोनों देवळियां पानी भराव क्षेत्र में थी, पानी के साथ मिट्टी आना स्वाभाविक था, आस्तिकजनों ने मूर्ति भाग से मिट्टी हटा कर उसे बाहर रखा तथा विवरण भाग भूमिगत रहा जिससे नीचे का भाग भूमि की सिलहन के कारण ऊपरी भाग को लगी हल्की चोट से अलग हो गया और विवरण भाग भूमि में रह गया। यह क्षेत्र आबादी में होने के कारण भविष्य में देवळी का आधा भाग मिल सकता है लेकिन वर्तमान में किसी ने भी इस सम्बन्ध में जानकारी नहीं दी। तीसरी देवळी राठौड़ नरहरिदास की है जो वि.सं. 1309 में युद्ध

मैदान में वीरगति को प्राप्त हुये, इनके पीछे भाटी किशना सती हुयी थी। क्षेत्रीय राजनीतिक स्थिति से प्रमाणित होता है कि यह युद्ध चरलू-छापर के शासक मोहिल सोहणपाल के साथ हुआ था। स्मरण रहे! युद्ध मैदान में वीरगति प्राप्त जुझार की देवळी स्थल (स्मारक) एवं सती का अग्नि स्नान स्थल (सती होने का स्थान) एक होना आवश्यक नहीं था लेकिन जुझार की देवळी (स्मारक) पर घोड़े के आगे सतियों का चित्र होना यहाँ की गौरवशाली परम्परा नहीं है।

लगभग 250 वर्षों तक राष्ट्रकूटों (राठौड़ों) की इस शाखा के 9-10 शासकों ने कोलासर पर स्वतंत्र एवं सामन्त की हैसियत से शासन किया। मोहिलों के बढते प्रभाव के आगे इस शाखा का अस्तित्व समाप्त हो गया। राजनीतिक घटनाचक्र एवं ऐतिहासिक तथ्य प्रमाणित करते हैं कि गोगाजी के वि.सं. 1082 में जुझार होने के उपरान्त उनके यशोगान में राजा सिंघराज कोलासर (कोळासर) गढ एवं राजकुमारी केलमदे का नाम प्रसंगवश आता रहा लेकिन 14वीं शताब्दी के लगभग मध्य में यह राजघराना जनसामान्य की जानकारी में नहीं रहा क्योंकि कोलासर पर मोहिलों का अधिकार हो गया और राठौड़ राज्य वि.सं. 1309 में ही समाप्त हो गया था। वि.सं. 1323 में बूड़ोजी व पाबूजी राठौड़ के वीरगति को प्राप्त होने के पश्चात् पाबूजी की आत्मा को देवशक्ति प्राप्त हुयी, कुछ वर्षों बाद लोककथाओं में परिवर्तन हो गया। कोळासर गढ की राजकुमारी केलमदे को कोळू गढ़ की राजकुमारी बता 300 वर्षों के अन्तर को भुलाकर बूड़ोजी की पुत्री बताया गया। गोगोजी, पाबूजी व केलमदे के यशोगान में लोककलाकारों एवं बातपोशों ने ऐतिहासिक तथ्यों को संयोगवश भ्रमित कर दिया तथा वास्तविक तथ्यों से दूरी और बढ गयी जब वि.सं. 1858 में कोलासर का नाम महाराजा बीकानेर ने रतनगढ़ कर दिया। स्मरण रहे! हमें आस्था की पट्टी को इतना खेंच कर नहीं बांधना चाहिये कि वास्तविक धरातल के दृश्य दीखने बन्द हो जायें।

कोलासर गढ से उत्तर-पश्चिम में स्थित कुओं-तालाबों के पास शान्त हुये युद्ध मैदान स्थल पर टांईं के नाथ आश्रम से वि.सं. 1101 में स्वरूपनाथ जी अपने शिष्यों के साथ आये एवं आश्रम स्थापित किया। योगी समाज की बही एवं लोकचर्चा के अनुसार उस समय आस-पास के क्षेत्र में कृषक तथा पशुपालकों की सात ढाणियाँ भी स्थाई-अस्थाई रूप से आबाद थी। इस स्थान को नाथों का डेरा नाम से पहचाना जाने लगा। वर्षों बाद इसी स्थान पर पुन: वि.सं. 1309 में राठौड़ों एवं मोहिलों के मध्य निर्णायक युद्ध हुआ जिसमें कोलासर के शासक राठौड़ नरहरिदास वीरगति को प्राप्त हुये, उनकी रानी भाटी किशना सती हुयी। सम्भवत: इस युद्ध के बाद या वि.सं. 1311 में लोहट मोहिल के छापर की गद्दी बैठने के उपरान्त राठौड़ इस क्षेत्र से अन्यत्र पलायन कर गये। कोलासर गाँव जागीर के रूप में मोहिल राजपरिवार के सदस्य को प्राप्त हुआ। ग्रामवासियों एवं बही के अनुसार लगभग 750 वर्ष पूर्व किशनसिंह चौहान ददरेवा से झगड़ा कर यहाँ आये तथा नाथजी के गृहस्थ शिष्य हुये, इनके वंशज हुडेरा गाँव में निवास करते हैं। मोयल गजेसिंह एवं उनके पुत्र रणधीरसिंह यहाँ के जागीरदार रहे हैं। मोयल दलपतसिंह देवलनाथ जी के समय हुये जिन्होंने नाथजी की तपस्या से प्रभावित होकर आश्रम के दक्षिण दिशा में दो कुओं का निर्माण करवाया तथा 700 बीघा भूमि आश्रम को प्रदान की। जुझार राठौड़ नरहरिदास जी की देवळी से सवा तीन हाथ उत्तर में बही के अनुसार देवळनाथ जी ने वि.सं. 1505 में जीवित समाधि ली। इस स्थान के क्षेत्र में कई समाधियाँ हैं। राठौड़ नरहरिदास की देवळी मूर्ति को मूल स्थान से हटाकर वर्तमान में देवळनाथ जी की मूर्ति के पीछे दीवार में स्थापित कर रखा है जहाँ नियमित पूजा होती है। इस स्थान से 50 मीटर उत्तर में परमार्थ जुझार हुये भोमियां जी का शक्तिसम्पन्न स्थान भी है। हथूंडी से आये सिंघराज हथूंडिया एवं उनकी राजकुमारी केलमदे की कहानी-कथाओं में प्रतिष्ठित तथा छापर के मोहिलों के

अधिकार में रहा कोलासर कालान्तर में बीकानेर के राठौड़ राज्य का अंग रहते हुये वि.सं. 1858 में रतनगढ के नाम से प्रतिष्ठित हुआ है। कोलासर की राठौड़ राजकुमारी केलमदे की कहानी लगभग 700 वर्षों से भ्रमित तथ्यों के साथ प्रचारित थी, जिसे प्रमाणित ग्रंथों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

संदर्भ ग्रंथ- (1) बीकानेर राज्य का इतिहास, लेखक-गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के पृ.सं. 75,76,77 (2) ख्यात देशदर्पण, लेखक-दयालदास सिंढायच के पृ.सं. 4,6 (3) राजपूत वंशावली, लेखक-ठा. ईश्वरसिंह मडाढ के पृ.सं. 6,54,55 (4) राष्ट्रकूटों का इतिहास, लेखक-विश्वेश्वरनाथ रेउ के पृ.सं. 14,48,58,61, 78,84,89,101 (5) हस्तिकुंडी का इतिहास, लेखक-डॉ. सोहनलाल पटनी के पृ.सं. 4,14,15,39,40 (6) चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास, लेखक-गोविन्द अग्रवाल के पृ.सं. 126,127,128,131,132 (7) पाबू प्रकास महाकाव्य, लेखक-मोडजी आशिया के पृ.सं. 70,72,81,104 (8) राजपूताने का इतिहास, लेखक-जगदीशसिंह गहलोत के पृ.सं. 7,8,24,29 (9) क्यामखां रासा, कविजान के दोहा संख्या 109,110,111 (10) चौहानों के राव उदयसिंह आसलपुर की गोगोपोता बही से (11) योगी समाज के राव काननाथ की बही में हुडेरा जोगियान के सम्बन्ध में लिखे विवरण से प्राप्त।

●

पृष्ठ 25 का शेष

क्षत्रिय समाज में विवाह संस्कार तब और अब सम्बन्ध से अनुबन्ध की यात्रा

उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सनातन विवाह साकार पद्धति के ध्वजवाहक के रूप में क्षत्रिय नर-नारियों ने आदर्शतम उदाहरण समाज के समक्ष रखे। इस संस्था को जीवन्त बनाये रखने हेतु व्यक्तिगत त्याग एवं बलिदान देने में सदैव अग्रणी रहे। यह स्थिति कमोबेश गत 50 वर्ष पूर्व तक बनी रही। आज हमारी विवाह संस्था एक पवित्र बन्धन एवं आत्म मिलन का प्रतीक नहीं रह गई है। हम वैवाहिक आयोजन एवं कर्मकाण्ड तो अभी भी पुराने परम्परागत ढंग से कर रहे हैं। विवाहों में दिखावे एवं भोजनादि पर व्यय अत्यधिक किया जाता है अपितु इन दोनों मदों पर धन का दुरुपयोग अधिकांश मामलों में होता है।

यह एक कठोर सच्चाई है कि अब हमारी विवाह संस्था व्यावहारिक रूप से एक अनुबन्ध के रूप में परिणित हो गई है जहाँ दोनों पक्ष एक दूसरे पर करार की शर्तों के उल्लंघन का आरोप-प्रत्यारोप लगाते हैं। एक पक्ष आर्थिक क्षति पूर्ति का दावा करता है, दूसरा पक्ष मोलभाव कर कम से कम ''राशि'' का भुगतान कर इस अनुबन्ध से मुक्ति का मार्ग खोजने का प्रयास करता है। दोनों पक्ष तात्कालिक रूप से इस बंधन से मुक्ति पर मानसिक तनाव से मुक्त अनुभव करते हैं। तथा नये सिरे से गृहस्थी को निर्मित करने हेतु परित्यक्त परित्यक्ता के साथ विवाह को सहज रूप से स्वीकार करने हेतु तत्पर होते हैं। यह स्थिति हाल के वर्षों में ही उत्पन्न हुई है। परन्तु ऐसे विवाहों के परिणाम पूर्व के अनुभवों से किस प्रकार भिन्न होंगे यह देखना शेष है। समाज की आधारशिला ''परिवार'' इस समय गम्भीर संक्रमण काल में है। अत: हमारा सामूहिक दायित्व इस दिशा में सकारात्मक प्रयास करने का बनता है। पवित्र विवाह संस्था के इस स्तर पर पहुँचने के कारणों एवं निराकरण के उपायों पर गम्भीर मन्थन की आवश्यकता है। हम यह चर्चा आगामी लेख में भी कर सकते हैं। इस हेतु सुधि पाठकों के सुझाव भी सादर आमंत्रित हैं।

✻

अपनी बात

जब भी मनुष्य के सामने उसके सारे सहारे समाप्त हो जाते हैं तभी उसके भीतर की शक्तियाँ जागती हैं। जब तक हम सहारों को पकड़ते हैं, तब तक हम अपने हाथ से अपने शत्रु हैं। तब तक हम अपने भीतर सोई हुई शक्तियों को जगने का मौका नहीं देते। जैसी स्थिति है उसी पर विश्वास करके बैठे रहना आत्मघाती सिद्ध हो सकता है। क्योंकि विश्वास हमारे विवेक को, हमारे विचार को जगने नहीं देता। जगने की कोई जरूरत ही नहीं रह जाती, कोई मौका नहीं रह जाता। लेकिन यदि हमारे विश्वासों को हटा दिया जाए तो हम विवश हो जाएँगे विचार करने को, तत्क्षण विचार करने को विवश हो जाएंगे। एक छोटी-छोटी बात पर भी भीतर विचार करने का मौका मिल जाएगा। हमको सोचना ही पड़ेगा क्योंकि बिना सोचे जीना असम्भव हो जाएगा। विश्वास को हटा दें तो भीतर विचार की सोयी हुई शक्ति में अद्भुत जागरण शुरू होगा। तभी विवेक उपलब्ध होगा।

अब तक जो भी मनुष्य विवेक को उपलब्ध हुए हैं, उन्होंने अपनी पुरानी धारणाओं के प्रति विश्वास को हटाकर ही विवेक को उपलब्ध किया है। हम विवेक को उपलब्ध नहीं हो सकते अगर हम ऐसे विश्वास को पकड़ते हैं। विश्वास को पकड़ते हैं आलस्य के कारण, भय के कारण। विश्वास को पकड़ते हैं कि बिना सहारे के क्या होगा? बिना सहारे के तो हम गिर जाएँगे। बिना सहारे गिर जाना भी किसी के सहारे से खड़े रहने से बेहतर है। क्योंकि जब हम गिरते हैं तो कुछ तो क्रिया हुई। हमारा गिरना हुआ लेकिन गिरने का कृत्य हमारा है। अगर हम गिर रहे हैं तो बचने के लिये कुछ तो करेंगे ही, क्योंकि गिरे रहना कौन पसन्द करता है? लेकिन जब सहारे से सम्हले रहते हैं और खड़े रहते हैं तब वह कृत्य हमारा नहीं है। खड़े रहना हमारा कृत्य नहीं, वह खड़े रहना किसी के सहारे पर है। ऐसा खड़ा रहना झूठा है, बिल्कुल मिथ्या है। हमारा गिरना भी सत्य है, दूसरे पर हाथ रखना झूठा है, इसलिए पूर्व धारणाओं के सारे सहारे छोड़ दें। अगर जीवन को पाना ही है तो ऐसे सारे सहारे छोड़ दें। हटाना होगा ऐसे पूर्व धारणाओं के विश्वास को और मौका देना होगा हमारी विचार की शक्ति को, ताकि वह सक्रिय हो जाए, काम में आ जाए। मौका देंगे तो हमारे भीतर विचार पैदा हो जाएगा।

कभी अगर तैरना सीखना चाहते हैं तो बेसहारे पानी में गिर जाना काफी है। जो भी इस सम्बन्ध में जानते हैं और तैरना सिखाते हैं वे एक ही काम करते हैं-तैरना सीखने वाले को पानी में धक्का देते हैं। हर व्यक्ति में अपने को बचाने की जो तीव्र आकांक्षा है, वही तैरना बन जाती है। लेकिन कोई अगर यह सोचता है कि बिना तैरना जाने मैं पानी में कभी न उतरूँगा तो फिर वह समझ ले कि व तैरना कभी सीख ही नहीं सकता। एक दिन तो बिना तैरना जाने हुए भी पानी में उतरना ही होगा। एक दिन तो अज्ञात, अनजान पानी में कूदना ही होगा। उससे ही तैरने की क्षमता बढती है।

लेकिन हमारा मन निरंतर सहारा खोजता है। सहारा खोजने वाला मन उस सहारे की गुलामी खोज रहा है जिसका हम सहारा खोजते हैं, उसके हम गुलाम हो जाते हैं। सब सहारा छोड़ दें तो हमारे भीतर वह मौजूद है जो जागेगा। हमारे भीतर वह शक्ति छिपी है वो उठेगी और बड़ी तीव्रता से उठेगी। लम्बे समय तक जिन धारणाओं की गुलामी लिए चलते हैं तो फिर वह गुलामी भी प्रीतिकर लगने लगती है। इसलिए ऐसा अवसर ही न आने दें और साधना मार्ग पर बढते हुए गुलामी से मुक्त होकर विवेक को जागृत करें। ●

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं -

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
01.	प्रा.प्र.शि. (बालक वर्ग)	09.05.2025 से 12.05.2025 तक	**बावतरा।** श्री कवाय माता मंदिर, तह. सायला-जालौर बाड़मेर-जालौर हाई-वे पर स्थित। सम्पर्क सूत्र : श्री गजेन्द्र सिंह कोमता-9461453360 इन्द्रसिंह सायला-9982831051
02.	उ.प्र.शि. (बालक वर्ग)	18.05.2025 से 29.05.2025 तक (18 मई को प्रात: 10 बजे तक पहुँचे)	**उदयपुर।** भूपाल नोबल्स संस्थान। राणा प्रताप रेल्वे स्टेशन के समीप। 10वीं की परीक्षा दी हुई हो। एक मा.प्र.शि. तथा दो प्रा.प्र.शि. किये हुए हों। झनकार, दोनों निर्देशिका, मेरी साधना, साधक की समस्याएँ व यज्ञ विधि पुस्तकें साथ में लावें।**गणवेश में-** काली निकर, सफेद कमीज या टी-शर्ट, धोती, सफेद कुर्ता व केसरिया साफा लाना है। शेष सामान निर्देशिका के अनुसार लावें।
03.	मा.प्र.शि. (मातृशक्ति वर्ग)	23.05.2025 से 27.05.2025 तक	**उदयपुर।** भूपाल नोबल्स संस्थान। राणा प्रताप रेल्वे स्टेशन के पास। 10वीं उत्तीर्ण। कम से कम दो शिविर किये हुए हो। **गणवेश-** केसरिया सलवार सूट, सायंकालीन प्रार्थना में केसरिया पोशाक या साड़ी। संघ साहित्य के साथ यज्ञ विधि भी लाएँ। पचास वर्ष से ऊपर की महिलाएँ बुलाने पर ही आवें।

गजेन्द्र सिंह आऊ
शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

तिलेषु तैलं दधिनीव सर्पिरापः स्रोतःस्वरणीषु चाग्निः।
एवमात्माऽत्मनि गृह्यतेऽसौ सत्येनैनं तपसा योऽनुपश्यति।।

मंत्र (श्वेताश्वतर उपनिषद् 1.15)

जैसे तिल में तेल, दही में घी, जल में उसका प्रवाह और लकड़ी में अग्नि गुप्त रूप से विद्यमान रहती है, वैसे ही आत्मा भी प्रत्येक प्राणी के हृदय में छिपी होती है। जो योगीजन सत्य के मार्ग पर चलकर, तप और ध्यान के माध्यम से उस आत्मा का दर्शन करते हैं, वही उस परम सत्य का साक्षात्कार करते हैं।

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर
SS KIRTEE
AN ISO 9001 : 2015 CERTIFIED COMPANY
Piping is Our Business Satisfaction is Our Goal
17425
CML-8600120461
IS:12786
CML-8600120457
IS:4984
CML-8600120464
Mr. Surendra Singh Shekhawat
Director
Shree Ganesh Enterprises
Manufacture Of:-
SS KIRTEE BRAND ISI HDPE Sprinkler Pipe
Mini Sprinkler System | HDPE Pipes & Coils For Water
SHREE GANESH ENTERPRISES
Khasra No. 315/6, 317,318, RIICO Road, Prasrampura, SKS Industrial Area
Reengus, Sikar (Rajasthan)
8209398951 surendrasinghshekhawat234@gmail.com
GANESH
HOTEL
Ganesh Singh Maharoli
Datar Singh Maharoli
Opp. Polovictory Cinema. Station Raod, Jaipur | Contact No. 9929105156

महाराणा प्रताप जी
की जयंती पर कोटि-कोटि नमन

IAS / RAS
तैयारी करने का राजस्थान का सर्वश्रेष्ठ संस्थान
स्प्रिंग बोर्ड
Spring Board

Springboard Academy,
Main Riddi Siddi Choraha,
Opposite Bank of Baroda,
Gopalpura, Bypass Jaipur
Website : www.springboardindia.org

मई, सन् 2025
वर्ष : 62, अंक : 05

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति

ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353

E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान्...

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड़, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़। Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org